विषय सूची

अध्याय-1

दशा विचार

आत्मा अमर है। यही आत्मा कर्मानुबंधन के कारण पुनः—पुनः शरीर धारण करती है। इस प्रकार जन्म—मृत्यु का अनवरत—चक्र सदा चलता रहता है। यह आत्मा भौतिक शरीर में आते ही निष्क्रिय होते हुए भी सक्रिय, स्वतंत्र होते हुए भी परतंत्र, सर्वगत होते हुए भी सीमित, निर्विकार होते हुए भी सुख—दुःख आदि विकारों का अनुभव करती है। यह सारे विकार जातक के जन्म समय की कुण्डली बतलाती हैं। इन कर्मानुबंधन को जन्म कुण्डली में स्थित योग बतलाते हैं। इन योगों का फल कब मिलेगा यह दशा बतलाती है। दशाओं में विंशोत्तरी दशा एक मुख्य दशा है।

ग्रह की मुख्य दशा महादशा कहलाती है। महादशा के भीतर उसके विभाग को अन्तर्दशा या भुक्ति कहते हैं। भुक्ति के विभाग को प्रत्यंतर दशा उपदशा या विदशा कहते हैं। प्रत्यंतर दशा के विभाग को सूक्ष्म दशा या फल दशा कहते हैं। सूक्ष्म दशा के विभाग को प्राण दशा कहते हैं। इस प्रकार महादशा को प्राण दशा तक बांटा जा सकता है। जिससे फल घटित होने का प्राण तक का समय निकाला जा सकता है। जिस ग्रह की महादशा हो उसे दशानाथदशेश कहते हैं। अन्तर्दशा के स्वामी को भुक्ति नाथ या अन्तर्दशा नाथ कहते हैं।

विंशोत्तरी दशा

इस दशा में आयु का अधिकतम मान 120 वर्ष है। 120 वर्षों को ग्रहों के दशा वर्षों में विभाजित किया है और ग्रहों को एक निश्चित क्रम में रखा है जो इस प्रकार है:

सूर्य की दशा	6 वर्ष
चंद्रमा की दशा	10 वर्ष
मंगल की दशा	7 वर्ष
राहु की दशा	18 वर्ष
बृहस्पति की दशा	16 वर्ष
शनि की दशा	19 वर्ष
बुध की दशा	17 वर्ष
केतु की दशा	7 वर्ष
शुक्र की दशा	20 वर्ष की होती है।

इस दशा का ज्ञान जन्म नक्षत्र के अनुसार किया जाता है। जो संक्षिप्त में इस प्रकार है।

जन्म नक्षत्र	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पु.	आश्ले.	म.	पू.फा.
	उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.
	उ.षा.	श्र.	ध.	श.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अश्वि.	भ.
दशा नाथ	सू.	चंद्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र
दशा वर्ष	6	10	7	18	16	19	17	7	20

दशा साधन की रीति

जब जातक का जन्म होता है, उस समय चंद्रमा जिस नक्षत्र में होता है उसे जन्म नक्षत्र कहते हैं। कृत्तिका नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गिन कर 9 से भाग देने से जो शेष बचे उसको सूर्य आदि जैसे तालिका में दिखाया गया है, क्रमशः गिनने पर जिस ग्रह का ज्ञान हो उस ग्रह की महादशा होती है।

जैसे किसी जातक का जन्म अनुराधा नक्षत्र में हुआ। कृत्तिका नक्षत्र से गिनने पर अनुराधा नक्षत्र 15 हुआ। 9 से भाग देने पर 6 शेष बचा। सूर्य से क्रमशः गिनने पर छठा शनि ग्रह आया। अर्थात् शनि ग्रह की महादशा चल रही है।

भुक्त व भोग्य वर्ष निकालना

ग्रह चलायमान है, इसलिए प्रत्येक ग्रह के अंश दिए होते हैं। इन अंशों से ग्रह किस नक्षत्र पर है, तथा उस नक्षत्र पर कितने अंश आगे चल चुका है, उससे ग्रह की शेष अवधि निकाली जाती है। एक नक्षत्र का मान $13^{0}20'$ अर्थात 800 कला होता है। इसे हम एक उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। माना कि चंद्रमा जन्म के समय 3 राशि 9^{0}–00 पर है। नक्षत्र गणना के अनुसार चंद्रमा पुष्य नक्षत्र पर हुआ तथा पुष्य नक्षत्र का स्वामी ग्रह शनि है। इसलिए जन्म समय जातक की शनि की दशा होगी। पुष्य नक्षत्र 3 रा 3^{0}–$20'$ से आरंभ होकर 3रा 16^{0}–$40'$ तक रहता है।

पुष्य की समाप्ति 3 रा	16–40
चंद्रमा के भुक्त अंश	09–00
शेष	07–40

चंद्रमा को पुष्य नक्षत्र के 7^0–40′ और भोगने हैं। इन भोग्य अंशों से शनि की शेष दशा का ज्ञान होता है। जैसे

यदि 13^0–20′/800 कला नक्षत्र की हो तो शनि की दशा =19

1 हो तो 19/800

यदि 7^0–40′ अर्थात 460 कला हो तो $\frac{19 \times 460}{800}$ = 10.925

= 10 वर्ष 11 मा. 3 दि.

इस प्रकार दशा का शेष भाग निकालने के बाद उसे जन्म तारीख में जोड़ देते हैं। जिससे दशा नाथ का समाप्ति काल मालूम हो जाता है। उसके बाद अन्य ग्रहों की क्रमशः दशा जोड़ते जाते हैं।

अन्तर्दशा–

प्रत्येक ग्रह की महादशा में नौ ग्रहों की अन्तर्दशा होती है। सबसे पहली अन्तर्दशा महादशा नाथ की होती है। जैसे सूर्य की महादशा में सबसे पहली अन्तर्दशा सूर्य की ही होगी। शेष अन्तर्दशा क्रम से अन्य ग्रहों की होगी। जैसे– सूर्य की महादशा में पहली अन्तर्दशा सूर्य की, दूसरी चंद्रमा की, तीसरी मंगल की, चौथी राहु की, पांचवीं बृहस्पति की, छठी शनि की, सातवीं बुध की, आठवीं केतु की तथा नौवीं अन्तर्दशा शुक्र की होती है। इस प्रकार अन्य ग्रहों की महादशाओं में भी 9 ग्रहों की अन्तर्दशाएं समझनी चाहिये।

अन्तर्दशा का मान

अन्तर्दशा का मान निकालना अत्यंत सरल है। हम जानते हैं कि 120 वर्ष में ग्रह को कितने वर्ष दिये गये हैं। गणित के इकाई के तरीके से ग्रह की अन्तर्दशा का मान निकालते हैं जैसे शनि का 120 वर्ष की आयु में 19 वर्ष दिये गये हैं।

120 वर्ष में = 19

$$\frac{19}{120}$$

19 ”

$$\frac{19 X 19}{120}$$

= 3.008 वर्ष

अर्थात = 3 वर्ष–00 मास–03 दिन

अर्थात $\frac{\text{महादशा नाथ X अन्तर्दशा नाथ}}{120}$ = वर्ष

अर्थात $\frac{\text{महादशा नाथ X अन्तर्दशा नाथ}}{10}$ = मास

इसी नियम के अनुसार हम प्रत्यन्तर्दशा ग्रहों की निकाल सकते हैं।

प्रत्यन्तर्दशा साधन

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रह की दशा में 9 ग्रहों की अन्तर्दशा चलती है।, उसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की अन्तर्दशा में 9 ग्रहों की प्रत्यन्तर दशा भी चलती है। अन्तर दशा में पहली प्रत्यन्तर दशा अन्तर दशा नाथ की होती है। शेष प्रत्यन्तर दशाएं क्रम से 9 ग्रहों की चलती है।

जैसे शनि के अन्तर शनि का प्रत्यन्तर्दशा मान निकालना है।

120 वर्ष में शनि का मान = 19

$$= \frac{19}{120}$$

3.008 (अन्तर्दशा का मान)

$$= \frac{19 X 3.008}{120}$$

= 0.4763

अर्थात 0 वर्ष 5 मास 21 दि 11.4 घं.

$$\frac{\text{महादशा नाथ X अन्तर्दशा नाथ X प्रयत्यन्तर 12 (मास) X 30 (दिन)}}{120 X 120}$$

$$= \frac{\text{महादशा नाथ X अन्तर्दशा नाथ प्रत्यन्तर्दशा नाथ}}{40} = \text{दिन}$$

अध्याय-2

कुण्डली

कुण्डली में तीन तत्त्व मिलते हैं।

1. भाव
2. राशि
3. ग्रह

जातक दशान्तर्दशा का अध्ययन करना चाहता है तो हम यह मान कर चलते हैं, कि जातक भाव व राशि के तत्वों को जानता है। दशान्तर्दशा ग्रहों की होती है। इसलिए हम दशान्तर्दशा का ही मुख्यतः अध्ययन करेंगे।

ग्रह शुभाशुभ–

सामान्यतया ग्रह दो प्रकार के फल देते हैं शुभ या अशुभ जो ग्रह नैसर्गिक रूप से शुभ फल देते हैं उन्हे शुभ ग्रह कहते है और जो ग्रह नैसर्गिक रूप में अशुभ फल देते हैं उन्हे अशुभ ग्रह कहते हैं। हमें शुभ व अशुभ को भी समझना होगा। शुभ वह है जिससे मन प्रसन्न होता है। अशुभ वह है जिससे मन दुःखी होता है। मानो मैं अपनी लड़की का विवाह कर रहा हूँ। इसमें मेरा व्यय हो रहा है, परन्तु मैं प्रसन्न हूँ। मुझे व्यय करने के बाद भी खुशी प्राप्त हो रही है, इसलिये वह समय मेरे लिए शुभ है।

दूसरी ओर मेरे पिता जी की मृत्यु हो गई परन्तु इन्शोरेन्स से दस लाख रुपये मिले। धन आ रहा है परन्तु मन दुःखी है इसलिये यह समय अशुभ है। पाराशरी नियमों के अनुसार ग्रह का शुभ या अशुभ होना मन की प्रसन्नता या दुःखी होने पर निर्भर करता है।

ग्रहों में गुरु व शुक्र नैर्गिक रूप से शुभ ग्रह है। पक्ष बल में बली चन्द्रमा व शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट बुध भी शुभ होता है।

चंद्रमा शुक्ल पक्ष की एकादशी से कृष्ण पक्ष की पंचमी तक चंद्रमा पूर्ण बली रहता है। इस चंद्रमा को शुभ ग्रह माना जाता है। कृष्ण पक्ष की एकादशी से शुक्ल पक्ष की पंचमी तक चन्द्रमा निर्बल रहता है। इस निर्बल चंद्रमा का अशुभ चंद्रमा कहते हैं। शुक्ल पक्ष की षष्ठी से दशमी तक तथा कृष्ण पक्ष की षष्ठी से दशमी तक चंद्रमा मध्यम बली रहता है। इसे मध्यम बली चंद्रमा कहते हैं तथा यह मिश्रित फल देता है। नीच चंद्रमा अर्थात् वृश्चिक राशि में चंद्रमा अशुभ नहीं कहलाता है।

सूर्य, मंगल, शनि राहु एवं केतु– ये पांचों ग्रह उत्तरोत्तर बली पाप ग्रह कहलाते हैं। इनके अलावा निर्बल चंद्रमा तथा अशुभ युक्त या दृष्ट बुध भी अशुभ ग्रहों की श्रेणी में आते हैं।

लग्न कुण्डली

रा. 11
गु.(व) 12
10
9
8
1
7 च.
2
4
सू. 6बु(अ) श.
3
5 मं.शु.के.
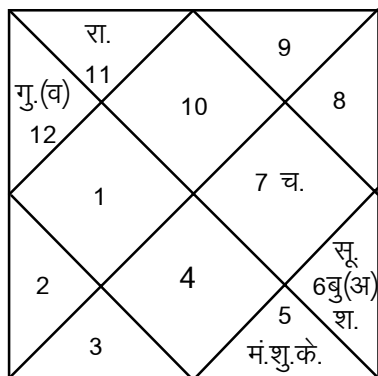
नवांश कुण्डली
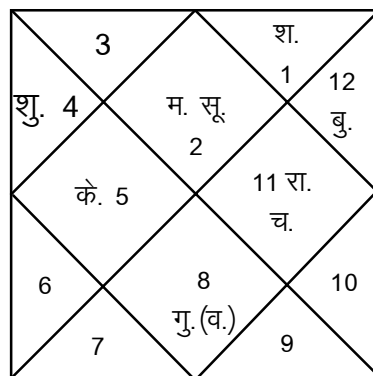
जातक का जन्म 3–10–1951 को 15–01 पर दिल्ली में हुआ। 09–28–1992 को बुध की महादशा शुरू हुई। बुध अपनी उच्च राशि व त्रिकोण में स्थित है। तब तक जातक का सुखी परिवार था। जातक बड़े भाई के साथ सुख से रहता था। बुध की दशा में जातक की माता की मृत्यु हुई। बड़े भाई से अलग हो गया। व्यापार अलग हो गया। दमा हो गया। अब नये सिरे से अपना व्यापार जमाने के लाले पड़ गये हैं। क्योंकि बुध, सूर्य व शनि के साथ अशुभ हो गया है।

फल– प्रत्येक घटना में दो तत्व होते हैं 1. मात्रात्मक फल कितना फल मिलेगा। 2. गुणात्मक फल शुभाशुभ फल। 100/रु. या 1000/रु. या 10,00,000/=रू कितनी मात्रा में फल प्राप्त होगा मात्रात्मक फल ग्रह के बल पर निर्भर करता है। एक ज्योतिषी को दोनों तत्वों का ध्यान रखना चाहिये। मात्रात्मक फल ग्रह के बल पर निर्भर करता है।

महर्षि पाराशर ने ग्रहों की मात्रात्मक फल देने की क्षमता का अनुमान लगाने के लिये विभिन्न अवस्थाएं बतलाई हैं। मुख्यतः

1. दीप्तादि अवस्थाएं
2. बालादि अवस्थाएं
3. जाग्रतादि अवस्थाएं

दीप्तादि अवस्थाएं

यह नौ अवस्थाएं होती हैं। ग्रह जब अपनी 1. उच्च राशि में स्थित होता है तो दीप्त 2. स्वराशि में स्थित हो तो स्वस्थ 3. अतिमित्र की राशि में स्थित हो तो मुदित 4. मित्र की राशि में स्थित हो तो शान्त 5. सम ग्रह की राशि में स्थित हो तो दीन 6. शत्रु ग्रह की राशि में स्थित हो तो दु:खी 7. पाप ग्रह के साथ हो तो विकल 8. अति पाप ग्रह की राशि में स्थित हो तो खल एवं 9. सूर्य के साथ स्थित हो तो **कोपी** होता है।

दीप्त ग्रह की दशान्तर्दशा में राज्य लाभ, अधिकार प्राप्त, धन, वाहन, स्त्री, पुत्रादि का लाभ व आदर सत्कार व राज्य सम्मान प्राप्त होता है।

स्वस्थ अर्थात स्वक्षेत्री ग्रह की दशान्तर्दशा के स्वास्थ्य लाभ, धन, सुख, विद्या, यश, स्त्री, वाहन, भूमि आदि का लाभ होता है।

मुदितावस्था (अधि मित्र की राशि) में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में वस्त्र, आभूषण, पुत्र, धन, वाहन आदि का लाभ होता है।

शान्तावस्था (मित्रराशि) में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में सुख, धर्म, भूमि, पुत्र स्त्री, वाहन, सम्मान प्राप्त होता है।

दीनावस्था (समग्रह की राशि) में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में स्थान परिवर्तन, बंधुओं से विरोध निन्दित, हीन स्वभाव, मित्र साथ छोड़ देते हैं, रोग आदि होने की सम्भावना होती है।

दु:खावस्था (शत्रुक्षेत्री) ग्रह की दशान्तर्दशा में जातक को कष्ट प्राप्त होते हैं। विदेश यात्रा, चोरी, अग्नि या रोगादि से धन हानि होती है।

विकलावस्था में (पापयुक्त ग्रह) की दशान्तर्दशा में मन में हीन भावना, मित्रों की मृत्यु, परिवार जनों की मृत्यु, स्त्री, पुत्र वाहन, भूमि, वस्त्रादि की हानि होती है।

खलावस्था अति (पाप ग्रह की राशि में स्थित) ग्रह की दशान्तर्दशा में कलह, वियोग (बन्धु,माता या पिता आदि की मृत्यु) शत्रुओं से पराजय, धन, भूमि, वाहन की हानि होती है।

कोपीअवस्था (सूर्य से अस्त) ग्रह की दशान्तर्दशा में अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। विद्या, धन, भूमि, वाहन, पुत्र, स्त्री, बन्धुओं से पीड़ा होती है।

बालादि अवस्थाएं

दीप्तादि अवस्था में ग्रह की राशि में स्थिति के अनुसार फल मिलेगा। बालादि अवस्था में हम ग्रह के अंशों के अनुसार फल कथन करते हैं। 6^0–6^0 अंश की यह अवस्था होती है। विषम राशियों में यदि ग्रह के अंश 0–6^0 तक को बालावस्था,

6+से 12^0 अंश तक को कुमार अवस्था

12^0+से 18^0 अंश तक युवावस्था

18+ से 24^0 अंश तक वृद्धावस्था

24^0+ से 30^0 अंश तक मृतावस्था होती है।

इसी प्रकार सम राशियों में ग्रह यदि 0^0–6^0 अंश तक को मृतावस्था 6^0+ से 12^0 अंश तक को वृद्धावस्था 12^0+ से 18^0 अंश तक को युवावस्था 18^0 से 24^0 अंश तक को कुमारावस्था 24^0+ से 30^0 अंश तक को बालावस्था कहते हैं।

बालावस्था में ग्रह का चौथाई फल, कुमारावस्था में आधा, युवावस्था मे पूरा, वृद्धावस्था में मामूली तथा मृतावस्था में शून्य फल प्राप्त होता है।

जाग्रतादि अवस्थाएं

10^0–10^0 अंश की यह अवस्था होती है। विषम राशियों में 0 से 10^0 अंश तक जाग्रत 10^0+ से 20^0 तक स्वप्न एवं 20^0+ से 30^0 तक सुषुप्त अवस्था होती है।

सम राशियों में 0 से 10^0 अंश तक सुषुप्त, 10^0 से 20^0 अंश तक स्वप्न एवं 20^0+ से 30^0 तक जाग्रत अवस्था होती है।

जाग्रत अवस्था में पूर्ण फल, स्वप्न में मध्यम तथा सुषुप्ति अवस्था में शून्य फल मिलता है।

इस प्रकार ग्रह का मात्रात्मक फल का विचार बृहत् पाराशर होरा शास्त्र में मिलता है। महर्षि पाराशर ने ग्रह का मात्रात्मक बल का विचार ग्रह भाव बल (षष्ठ बल) आदि से तथा षष्ठ वर्गीय बल से भी किया है। लिखने का अर्थ केवल इतना ही है कि ग्रह के बल का भी उतना ही महत्व है जितना किसी अन्य बल का। इसलिए फल कथन से पहले ग्रह की अवस्था तथा अंशों का ध्यान रखकर मात्रात्मक फल का अनुमान करना चाहिये। क्योंकि दाशान्तर्दशा के द्वारा दोनों तत्त्वों का समावेश करके फल कथन करना चाहिये।

गुणात्मक बल

ग्रह शुभ फल देगा या अशुभ फल इसको गुणात्मक बल कहते हैं। गुणात्मक बल दो तरह से देखा जा सकता है।

1. ग्रह नैसर्गिक शुभ या अशुभ फल।

हम अच्छी तरह से नैसर्गिक शुभ व अशुभ ग्रहों को जानते हैं बृहस्पति, शुक्र पक्ष बली चंद्रमा तथा शुभ युक्त या दृष्ट बुध नैसर्गिक शुभ ग्रह हैं।

2. तत्कालित शुभ या अशुभ फल

प्रत्येक कुण्डली में कुछ भाव शुभ व कुछ अशुभ तथा कुछ सम होते हैं। शुभ भाव के स्वामी शुभ फल देते हैं। अशुभ भाव का स्वामी अशुभ फल देता है। सम भाव का स्वामी भाव में स्थित ग्रह या युति या दृष्टि या अपनी दूसरी राशि के अनुसार अपना फल देता है। इस नियम का प्रयोग हम विंशोत्तरी दशा में करते हैं। नैसर्गिक शुभ तथा अशुभ हम अन्य दशाओं में करते हैं।

''फलदीपिका'' में भी महर्षि मन्त्रेश्वर ने दशान्तर्दशा के लिए पहले ग्रहों के नैसर्गिक शुभाशुभ फल का कथन किया है। बाद के श्लोकों में विंशोत्तरी दशा के लिए भावाधिपति के आधार पर फल कथन किया है। इसलिए सबसे पहले सूर्यादि ग्रहों का संक्षिप्त में नैसर्गिक फल के अनुसार उनकी दशाओं का अध्ययन करेंगे।

नक्षत्र वर्ग तथा विंशोत्तरी दशा आरंभ

नक्षत्र		राश्यांश			विंशोत्तरी दशा आरंभ	
		राशि	अंश	कला		वर्ष
1.	अश्विनी	0	0	00	केतु	7
2.	भरणी	0	13	20	शुक्र	20
3.	कृतिका	0	26	40	सूर्य	6
4.	रोहिणी	1	10	00	चंद्र	10
5.	मृगशिरा	1	23	20	मंगल	7
6.	आर्द्रा	2	6	40	राहु	18
7.	पुनर्वसु	2	20	00	गुरु	16
8.	पुष्य	3	3	20	शनि	19
9.	आश्लेषा	3	16	40	बुध	17
10.	मघा	4	0	00	केतु	7
11.	पूर्वा फाल्गुनी	4	13	20	शुक्र	20
12.	उत्तरा फाल्गुनी	4	26	40	सूर्य	6
13.	हस्त	5	10	00	चंद्र	10
14.	चित्रा	5	23	20	मंगल	7
15.	स्वाती	6	6	40	राहु	18
16.	विशाखा	6	20	00	गुरु	16
17.	अनुराधा	7	3	20	शनि	19
18.	ज्येष्ठा	7	16	40	बुध	17
19.	मूला	8	0	00	केतु	7
20.	पूर्वाषाढ़	8	13	20	शुक्र	20
21.	उत्तराषाढ़	8	26	40	सूर्य	6
22.	श्रवण	9	10	00	चंद्र	10
23.	धनिष्ठा	9	23	20	मंगल	7
24.	शतभिषा	10	6	40	राहु	18
25.	पूर्वाभाद्रपद	10	00	00	गुरु	16
26.	उत्तराभाद्रपद	11	3	20	शनि	19
27.	रेवती	11	16	40	बुध	17
1.	अश्विनी	12	0	00	केतु	7

प्राचीन अभिजित नक्षत्र 9^s 6° 40' 0" से बढ़कर 9^s 10° 53' 20" तक पहुंच जाता है।

विंशोत्तरी दशा तथा अंतर्दशा

अंतर्दशा	सूर्य (रवि) – 6						चंद्र – 10						मंगल – 7					
	प्रत्यंतर्दशा			योग			प्रत्यंतर्दशा			योग			प्रत्यंतर्दशा			योग		
	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.
सूर्य	0	3	18	0	3	18	-	-		-	-	-	-	-	-	-	-	-
चंद्र	0	6	0	0	9	18	0	10	0	0	10	0	-	-	-	-	-	-
मंगल	0	4	6	1	1	24	0	7	0	1	5	0	0	4	27	0	4	27
राहु	0	10	24	2	0	18	1	6	0	2	11	0	1	0	18	1	5	15
गुरु	0	9	18	2	10	6	1	4	0	4	3	0	0	11	6	2	4	21
शनि	0	11	12	3	9	18	1	7	0	5	10	0	1	1	9	3	6	0
बुध	0	10	6	4	7	24	1	5	0	7	3	0	0	11	27	4	5	27
केतु	0	4	6	5	0	0	0	7	0	7	10	0	0	4	27	4	10	24
शुक्र	1	0	0	6	0	0	1	8	0	9	6	0	1	2	0	6	0	24
सूर्य	-	-	-	-	-	-	0	6	0	10	0	0	0	4	6	6	5	0
चंद्र	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	0	7	0	7	0	0

अंतर्दशा	राहु - 18						बृहस्पति – 16						शनि – 19					
	प्रत्यंतर्दशा			योग			प्रत्यंतर्दशा			योग			प्रत्यंतर्दशा			योग		
	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.
राहु	2	8	12	2	8	12	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
गुरु	2	4	24	5	1	6	2	1	18	2	1	18	-	-	-	-	-	-
शनि	2	10	6	7	11	12	2	6	12	4	8	0	3	0	3	3	0	3
बुध	2	6	18	10	6	0	2	3	6	6	11	6	2	8	9	5	8	12
केतु	1	0	18	11	6	18	0	11	6	7	10	12	1	1	9	6	9	21
शुक्र	3	0	0	14	6	18	2	8	0	10	6	12	3	2	0	9	11	21
सूर्य	0	10	24	15	5	12	0	9	18	11	4	0	0	11	12	10	11	3
चंद्र	1	6	0	16	11	12	1	4	0	12	8	0	1	7	0	12	6	3
मंगल	1	0	18	18	0	0	0	11	6	13	7	6	1	1	9	13	7	12
राहु	-	-	-	-	-	-	2	4	24	16	0	0	2	10	6	16	5	18
गुरु	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	2	6	12	19	0	0

अंतर्दशा	बुध – 17						केतु – 7						शुक्र – 20					
	प्रत्यंतर्दशा			योग			प्रत्यंतर्दशा			योग			प्रत्यंतर्दशा			योग		
	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.	वर्ष	म.	दि.
बुध	2	4	27	2	4	27	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
केतु	0	11	27	3	4	24	0	4	27	0	4	27	-	-	-	-	-	-
शुक्र	2	10	0	6	2	24	1	2	0	1	6	27	3	4	0	3	4	0
सूर्य	0	10	6	7	1	0	0	4	6	1	11	3	1	0	0	4	4	0
चंद्र	1	5	0	8	6	0	0	7	0	2	6	3	1	8	0	6	0	0
मंगल	0	11	27	9	5	27	0	4	27	2	11	0	1	2	0	7	2	0
राहु	2	6	18	12	0	15	1	0	18	3	11	18	3	0	0	10	2	0
गुरु	2	3	6	14	3	21	0	11	6	4	10	24	2	8	0	12	10	0
शनि	2	8	9	17	0	0	1	1	9	6	0	3	3	2	0	16	0	0
बुध	-	-	-	-	-	-	0	11	27	7	0	0	2	10	0	18	10	0
केतु	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	1	2	0	20	0	0

चंद्र स्पष्ट से विंशोत्तरी दशा का भोग्यकाल

चंद्र स्पष्ट		मेष, सिंह तथा धनु स्थित चंद्र				वृष, कन्या तथा मकर स्थित चंद्र				मिथुन, तुला तथा कुंभ स्थित चंद्र				कर्क, वृश्चिक तथा मीन स्थित चंद्र			
°	'		वर्ष	म.	दि.		वर्ष	म.	दि.		वर्ष	म.	दि.		वर्ष	म.	दि.
0	0	केतु	7	0	0	सूर्य	4	6	0	मंगल	3	6	0	गुरु	4	0	0
0	20		6	9	27		4	4	6		3	3	27		3	7	6
0	40		6	7	24		4	2	12		3	1	24		3	2	12
1	0		6	5	21		4	0	18		2	11	21		2	9	18
1	20		6	3	18		3	10	24		2	9	18		2	4	24
1	40		6	1	15		3	9	0		2	7	15		2	0	0
2	0		5	11	12		3	7	6		2	5	12		1	7	6
2	20		5	9	9		3	5	12		2	3	9		1	2	12
2	40		5	7	6		3	3	18		2	1	6		0	9	18
3	0		5	5	3		3	1	24		1	11	3		0	4	24

3	20	5	3	0	3	0	0	1	9	0	शनि 19	0	0
3	40	5	0	27	2	10	6	1	6	27	18	6	9
4	0	4	10	24	2	8	12	1	4	24	18	0	18
4	20	4	8	21	2	6	18	1	2	21	17	6	27
4	40	4	6	18	2	4	24	1	0	18	17	1	6
5	0	4	4	15	2	3	0	0	10	15	16	7	15
5	20	4	2	12	2	1	6	0	8	12	16	1	24
5	40	4	0	9	1	11	12	0	6	9	15	8	3
6	0	3	10	6	1	9	18	0	4	6	15	2	12
6	20	3	8	3	1	7	24	0	2	3	14	8	21
6	40	3	6	0	1	6	0	राहु 18	0	0	14	3	0
7	0	3	3	27	1	4	6	17	6	18	13	9	9
7	20	3	1	24	1	2	12	17	1	6	13	3	18
7	40	2	11	21	1	0	18	16	7	24	12	9	27
8	0	2	9	18	0	10	24	16	2	12	12	4	6
8	20	2	7	15	0	9	0	15	9	0	11	10	15
8	40	2	5	12	0	7	6	15	3	18	11	4	24
9	0	2	3	9	0	5	12	14	10	6	10	11	3
9	20	2	1	6	0	3	18	14	4	24	10	5	12
9	40	1	11	3	0	1	24	13	11	12	9	11	21
10	0	1	9	0	चंद्र 10	0	0	13	6	0	9	6	0
10	20	1	6	27	9	9	0	13	0	18	9	0	9
10	40	1	4	24	9	6	0	12	7	6	8	6	18
11	0	1	2	21	9	3	0	12	1	24	8	0	27
11	20	1	0	18	9	0	0	11	8	12	7	7	6
11	40	0	10	15	8	9	0	11	3	0	7	1	15
12	0	0	8	12	8	6	0	10	9	18	6	7	24
12	20	0	6	9	8	3	0	10	4	6	6	2	3
12	40	0	4	6	8	0	0	9	10	24	5	8	12
13	0	0	2	3	7	9	0	9	5	12	5	2	21
13	20	शुक्र 20	0	0	7	6	0	9	0	0	4	9	0
13	40	19	6	0	7	3	0	8	6	18	4	3	9
14	0	19	0	0	7	0	0	8	1	6	3	9	18
14	20	18	6	0	6	9	0	7	7	24	3	3	27
14	40	18	0	0	6	6	0	7	2	12	2	10	6

15	0	शुक्र	17	6	0	चंद्र	6	3	0	राहु	6	9	0	शनि	2	4	15
15	20		17	0	0		6	0	0		6	3	18		1	10	24
15	40		16	6	0		5	9	0		5	10	6		1	5	3
16	0		16	0	0		5	6	0		5	4	24		0	11	12
16	20		15	6	0		5	3	0		4	11	12		0	5	21
16	40		15	0	0		5	0	0		4	6	0	बुध	17	0	0
17	0		14	6	0		4	9	0		4	0	18		16	6	27
17	20		14	0	0		4	6	0		3	7	6		16	1	24
17	40		13	6	0		4	3	0		3	1	24		15	8	21
18	0		13	0	0		4	0	0		2	8	12		15	3	18
18	20		12	6	0		3	9	0		2	3	0		14	10	15
18	40		12	0	0		3	6	0		1	9	18		14	5	12
19	0		11	6	0		3	3	0		1	4	6		14	0	9
19	20		11	0	0		3	0	0		0	10	24		13	7	6
19	40		10	6	0		2	9	0		0	5	12		13	2	3
20	0		10	0	0		2	6	0	गुरु	16	0	0		12	9	0
20	20		9	6	0		2	3	0		15	7	6		12	3	27
20	40		9	0	0		2	0	0		15	2	12		11	10	24
21	0		8	6	0		1	9	0		14	9	18		11	5	21
21	20		8	0	0		1	6	0		14	4	24		11	0	18
21	40		7	6	0		1	3	0		14	0	0		10	7	15
22	0		7	0	0		1	0	0		13	7	6		10	2	12
22	20		6	6	0		0	9	0		13	2	12		9	9	9
22	40		6	0	0		0	6	0		12	9	18		9	4	6
23	0		5	6	0		0	3	0		12	4	24		8	11	3
23	20		5	0	0	मंगल	7	0	0		12	0	0		8	6	0
23	40		4	6	0		6	9	27		11	7	6		8	0	27
24	0		4	0	0		6	7	24		11	2	12		7	7	24
24	20		3	6	0		6	5	21		10	9	18		7	2	21
24	40		3	0	0		6	3	18		10	4	24		6	9	18
25	0		2	6	0		6	1	15		10	0	0		6	4	15
25	20		2	0	0		5	11	12		9	7	6		5	11	12
25	40		1	6	0		5	9	9		9	2	12		5	6	9
26	0		1	0	0		5	7	6		8	9	18		5	1	6
26	20		0	6	0		5	5	3		8	4	24		4	8	3

26	40	सूर्य	6	0	0	5	3	0	8	0	0	4	3	0
27	0		5	10	6	5	0	27	7	7	6	3	9	27
27	20		5	8	12	4	10	24	7	2	12	3	4	24
27	40		5	6	18	4	8	21	6	9	18	2	11	21
28	0		5	4	24	4	6	18	6	4	24	2	6	18
28	20		5	3	0	4	4	15	6	0	0	2	1	15
28	40		5	1	6	4	2	12	5	7	6	1	8	12
29	0		4	11	12	4	0	9	5	2	12	1	3	9
29	20		4	9	18	3	10	6	4	9	18	0	10	6
29	40		4	7	24	3	8	3	4	4	24	0	5	3
30	0		4	6	0	3	6	0	4	0	0	0	0	0

ग्रह–दशा के आनुपातिक अंश

(चंद्र भोगांश की कलाओं के बढ़ते क्रम के अनुसार तालिका में दी गयी संख्या को दशा के भोग्य काल से घटाएं)

	केतु (7व)		शुक्र (20व)		सूर्य (6व)		चंद्र (10व)		मंगल (7व)		राहु (18व)		गुरु (16व)		शनि (19व)		बुध (17व)		
	म	दि	म	दि	म	दि	म	दि	म	दि	म	दि	म	दि	म	दि	म	दि	
1	0	3	0	9	0	3	0	5	0	3	0	8	0	7	0	9	0	8	1
2	0	6	0	18	0	5	0	9	0	6	0	16	0	14	0	17	0	15	2
3	0	9	0	27	0	8	0	14	0	9	0	24	0	22	0	26	0	23	3
4	0	13	1	6	0	11	0	18	0	13	1	2	0	29	1	4	1	1	4
5	0	16	1	15	0	14	0	23	0	16	1	11	1	6	1	13	1	8	5
6	0	19	1	24	0	16	0	27	0	19	1	19	1	13	1	21	1	16	6
7	0	22	2	3	0	19	1	2	0	22	1	27	1	20	2	0	1	24	7
8	0	25	2	12	0	22	1	6	0	25	2	5	1	28	2	8	2	1	8
9	0	28	2	21	0	24	1	11	0	28	2	13	2	5	2	17	2	9	9
10	1	1	3	0	0	27	1	15	1	1	2	21	2	12	2	26	2	17	10
15	1	17	4	15	1	11	2	8	1	17	4	2	3	18	4	8	3	25	15
20	2	3	6	0	1	24	3	0	2	3	5	12	4	24	5	21	5	3	20

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(सूर्य प्रत्यंतर्दशा – 6 वर्ष)

सूर्य अंतर्दशा

सूर्य-सूर्य

	मा.	दि.	घं.
सूर्य	0	5	10
चंद्र	0	9	0
मंगल	0	6	7
राहु	0	16	5
गुरु	0	14	10
शनि	0	17	2
बुध	0	15	7
केतु	0	6	7
शुक्र	0	18	0
योग	**3**	**18**	**0**

सूर्य-चंद्र

	मा.	दि.	घं.
चंद्र	0	15	0
मंगल	0	10	12
राहु	0	27	0
गुरु	0	24	0
शनि	0	28	12
बुध	0	25	12
केतु	0	10	12
शुक्र	1	0	0
सूर्य	0	9	0
योग	**6**	**0**	**0**

सूर्य-मंगल

	मा.	दि.	घं.
मंगल	0	7	8
राहु	0	18	22
गुरु	0	16	19
शनि	0	19	23
बुध	0	17	21
केतु	0	7	8
शुक्र	0	21	0
सूर्य	0	6	7
चंद्र	0	10	12
योग	**4**	**6**	**0**

सूर्य-राहु

	मा.	दि.	घं.
राहु	1	18	14
गुरु	1	13	5
शनि	1	21	7
बुध	1	15	22
केतु	0	18	21
शुक्र	1	24	0
सूर्य	0	16	5
चंद्र	0	27	0
मंगल	0	18	22
योग	**10**	**24**	**0**

सूर्य-गुरु

	मा.	दि.	घं.
गुरु	1	8	10
शनि	1	15	14
बुध	1	10	19
केतु	0	16	19
शुक्र	1	18	0
सूर्य	0	14	10
चंद्र	0	24	0
मंगल	0	16	19
राहु	1	13	5
योग	**9**	**18**	**0**

सूर्य-शनि

	मा.	दि.	घं.
शनि	1	24	3
बुध	1	18	11
केतु	0	19	23
शुक्र	1	27	0
सूर्य	0	17	2
चंद्र	0	28	12
मंगल	0	19	23
राहु	1	21	7
गुरु	1	15	15
योग	**11**	**12**	**0**

सूर्य-बुध

	मा.	दि.	घं.
बुध	1	13	8
केतु	0	17	20
शुक्र	1	21	0
सूर्य	0	15	7
चंद्र	0	25	12
मंगल	0	17	21
राहु	1	15	22
गुरु	1	10	19
शनि	1	18	11
योग	**10**	**6**	**0**

सूर्य-केतु

	मा.	दि.	घं.
केतु	0	7	8
शुक्र	0	21	0
सूर्य	0	6	7
चंद्र	0	10	12
मंगल	0	7	8
राहु	0	18	22
गुरु	0	16	20
शनि	0	19	23
बुध	0	17	20
योग	**4**	**6**	**0**

सूर्य-शुक्र

	मा.	दि.	घं.
शुक्र	2	0	0
सूर्य	0	18	0
चंद्र	1	0	0
मंगल	0	21	0
राहु	1	24	0
गुरु	1	18	0
शनि	1	27	0
बुध	1	21	0
केतु	0	21	0
योग	**12**	**0**	**0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(चंद्र प्रत्यंतर्दशा – 10 वर्ष)

चंद्र अंतर्दशा

चंद्र-चंद्र	मा.	दि.	घं.
चंद्र	0	25	0
मंगल	0	17	12
राहु	1	15	0
गुरु	1	10	0
शनि	1	17	12
बुध	1	12	12
केतु	0	17	12
शुक्र	1	20	0
सूर्य	0	15	0
योग	**10**	**0**	**0**

चंद्र-मंगल	मा.	दि.	घं.
मंगल	0	12	6
राहु	1	1	12
गुरु	0	28	0
शनि	1	3	6
बुध	0	29	18
केतु	0	12	6
शुक्र	1	5	0
सूर्य	0	10	12
चंद्र	0	17	12
योग	**7**	**0**	**0**

चंद्र-राहु	मा.	दि.	घं.
राहु	2	21	0
गुरु	2	12	0
शनि	2	25	12
बुध	2	16	12
केतु	1	1	12
शुक्र	3	0	12
सूर्य	0	27	0
चंद्र	1	15	0
मंगल	1	1	0
योग	**18**	**0**	**0**

चंद्र-गुरु	मा.	दि.	घं.
गुरु	2	4	0
शनि	2	16	0
बुध	2	8	0
केतु	0	28	0
शुक्र	2	20	0
सूर्य	0	24	0
चंद्र	1	10	0
मंगल	0	28	0
राहु	2	12	0
योग	**16**	**0**	**0**

चंद्र-शनि	मा.	दि.	घं.
शनि	3	0	6
बुध	2	20	18
केतु	1	3	6
शुक्र	3	5	0
सूर्य	0	28	12
चंद्र	1	17	12
मंगल	1	3	6
राहु	2	25	12
गुरु	2	16	0
योग	**19**	**0**	**0**

चंद्र-बुध	मा.	दि.	घं.
बुध	2	12	18
केतु	0	29	18
शुक्र	2	25	0
सूर्य	0	25	0
चंद्र	1	12	12
मंगल	0	29	18
राहु	2	16	12
गुरु	2	8	0
शनि	2	20	18
योग	**17**	**0**	**0**

चंद्र-केतु	मा.	दि.	घं.
केतु	0	12	6
शुक्र	1	5	0
सूर्य	0	10	12
चंद्र	0	17	12
मंगल	0	12	6
राहु	1	1	12
गुरु	0	28	0
शनि	1	3	6
बुध	0	29	18
योग	**7**	**0**	**0**

चंद्र-शुक्र	मा.	दि.	घं.
शुक्र	3	10	0
सूर्य	1	0	0
चंद्र	1	20	0
मंगल	1	5	0
राहु	3	0	0
गुरु	2	20	0
शनि	3	5	0
बुध	2	25	0
केतु	1	5	0
योग	**20**	**0**	**0**

चंद्र-सूर्य	मा.	दि.	घं.
सूर्य	0	9	0
चंद्र	0	15	0
मंगल	0	10	12
राहु	0	27	0
गुरु	0	24	0
शनि	0	28	12
बुध	0	25	12
केतु	0	10	12
शुक्र	1	0	0
योग	**6**	**0**	**0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(मंगल प्रत्यंतर्दशा – 7 वर्ष)

मंगल अंतर्दशा

मंगल-मंगल

	मा	दि	घं
मंगल	0	8	13.8
राहु	0	22	1.2
गुरु	0	19	14.4
शनि	0	23	6.6
बुध	0	20	19.8
केतु	0	8	13.8
शुक्र	0	24	12.0
सूर्य	0	7	8.4
चंद्र	0	12	6.0
योग	**4**	**27**	**0.0**

मंगल-राहु

	मा	दि	घं
राहु	1	26	16.8
गुरु	1	20	9.6
शनि	1	29	20.4
बुध	1	23	13.2
केतु	0	22	1.2
शुक्र	2	3	0.0
सूर्य	0	18	21.6
चंद्र	1	1	12.0
मंगल	0	22	1.2
योग	**12**	**18**	**0.0**

मंगल-गुरु

	मा	दि	घं
गुरु	1	14	19.2
शनि	1	23	4.8
बुध	1	17	14.4
केतु	0	19	14.4
शुक्र	1	26	0.0
सूर्य	0	16	19.2
चंद्र	0	28	0.0
मंगल	0	19	14.4
राहु	1	20	9.6
योग	**11**	**6**	**0.0**

मंगल-शनि

	मा	दि	घं
शनि	2	3	4.2
बुध	1	26	12.6
केतु	0	23	6.6
शुक्र	2	6	12.0
सूर्य	0	19	22.8
चंद्र	1	3	6.0
मंगल	0	23	6.6
राहु	1	29	20.4
गुरु	1	23	4.8
योग	**13**	**9**	**0.0**

मंगल-बुध

	मा	दि	घं
बुध	1	20	13.8
केतु	0	20	19.8
शुक्र	1	29	12.0
सूर्य	0	17	20.4
चंद्र	0	29	18.0
मंगल	0	20	19.8
राहु	1	23	13.2
गुरु	1	17	14.4
शनि	1	26	12.6
योग	**11**	**17**	**0.0**

मंगल-केतु

	मा	दि	घं
केतु	0	8	13.8
शुक्र	0	24	12.0
सूर्य	0	7	8.4
चंद्र	0	12	6.0
मंगल	0	8	13.8
राहु	0	22	1.2
गुरु	0	19	14.4
शनि	0	23	6.6
बुध	0	20	19.8
योग	**4**	**27**	**0.0**

मंगल-शुक्र

	मा	दि	घं
शुक्र	2	10	0
सूर्य	0	21	0
चंद्र	1	5	0
मंगल	0	24	12
राहु	2	3	0
गुरु	1	26	0
शनि	2	6	12
बुध	1	29	12
केतु	0	24	12
योग	**14**	**0**	**0**

मंगल-सूर्य

	मा	दि	घं
सूर्य	0	6	7.2
चंद्र	0	10	12.0
मंगल	0	7	8.4
राहु	0	18	21.6
गुरु	0	16	19.2
शनि	0	19	22.8
बुध	0	17	20.4
केतु	0	7	8.4
शुक्र	0	21	0.0
योग	**4**	**6**	**0**

मंगल-चंद्र

	मा	दि	घं
चंद्र	0	17	12
मंगल	0	12	6
राहु	1	1	12
गुरु	0	28	0
शनि	1	3	6
बुध	0	29	18
केतु	0	12	6
शुक्र	1	5	0
सूर्य	0	10	12
योग	**7**	**0**	**0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(राहु प्रत्यंतर्दशा – 18 वर्ष)

राहु अंतर्दशा

राहु-राहु

	मा	दि	घं
राहु	4	25	19.2
गुरु	4	9	14.4
शनि	5	3	21.6
बुध	4	17	16.8
केतु	1	26	16.8
शुक्र	5	12	0.0
सूर्य	1	18	14.4
चंद्र	2	21	0.0
मंगल	1	26	16.8
योग	**32**	**12**	**0.0**

राहु-गुरु

	मा	दि	घं
गुरु	3	25	4.8
शनि	4	16	19.2
बुध	4	2	9.6
केतु	1	20	9.6
शुक्र	4	24	0.0
सूर्य	1	13	4.0
चंद्र	2	12	0.8
मंगल	1	20	9.6
राहु	4	9	14.4
योग	**28**	**24**	**0.0**

राहु-शनि

	मा	दि	घं
शनि	5	12	10.8
बुध	4	25	8.4
केतु	1	29	20.4
शुक्र	5	21	0.0
सूर्य	1	21	7.2
चंद्र	2	25	12.0
मंगल	1	29	20.4
राहु	5	3	21.6
गुरु	4	16	19.2
योग	**34**	**6**	**0.0**

राहु-बुध

	मा	दि	घं
बुध	4	10	1.2
केतु	1	23	13.2
शुक्र	5	3	0.0
सूर्य	1	15	21.6
चंद्र	2	16	12.0
मंगल	1	23	13.2
राहु	4	17	16.8
गुरु	4	2	9.6
शनि	4	25	8.4
योग	**30**	**18**	**0.0**

राहु-केतु

	मा	दि	घं
केतु	0	22	1.2
शुक्र	2	3	0.0
सूर्य	0	18	21.6
चंद्र	1	1	12.0
मंगल	0	22	1.2
राहु	1	26	16.8
गुरु	1	20	9.6
शनि	1	29	20.4
बुध	1	23	13.2
योग	**12**	**18**	**0.0**

राहु-शुक्र

	मा	दि	घं
शुक्र	6	0	0
सूर्य	1	24	0
चंद्र	3	0	0
मंगल	2	3	0
राहु	5	12	0
गुरु	4	24	0
शनि	5	21	0
बुध	5	3	0
केतु	2	3	0
योग	**36**	**0**	**0**

राहु-सूर्य

	मा	दि	घं
सूर्य	0	16	4.8
चंद्र	0	27	0.0
मंगल	0	18	21.6
राहु	1	18	14.4
गुरु	1	13	4.8
शनि	1	21	7.2
बुध	1	15	21.6
केतु	0	18	21.6
शुक्र	1	24	0.0
योग	**10**	**24**	**0.0**

राहु-चंद्र

	मा	दि	घं
चंद्र	1	15	0
मंगल	1	1	12
राहु	2	21	0
गुरु	2	12	0
शनि	2	25	12
बुध	2	16	12
केतु	1	1	12
शुक्र	3	0	0
सूर्य	0	27	0
योग	**18**	**0**	**0**

राहु-मंगल

	मा	दि	घं
मंगल	0	22	1.2
राहु	1	26	16.8
गुरु	1	20	9.6
शनि	1	29	20.4
बुध	1	23	13.2
केतु	0	22	1.2
शुक्र	2	3	0.0
सूर्य	0	18	21.6
चंद्र	1	1	12.0
योग	**12**	**18**	**0.0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(गुरु प्रत्यंतर्दशा – 16 वर्ष)

गुरु अंतर्दशा

गुरु-गुरु

	मा	दि	घं
गुरु	3	12	9.6
शनि	4	1	14.4
बुध	3	18	19.2
केतु	1	14	19.2
शुक्र	4	8	0.0
सूर्य	1	8	9.6
चंद्र	2	4	0.0
मंगल	1	14	19.2
राहु	3	25	4.8
योग	**25**	**18**	**0.0**

गुरु-शनि

	मा	दि	घं
शनि	4	24	9.6
बुध	4	9	4.8
केतु	1	23	4.8
शुक्र	5	2	0.0
सूर्य	1	15	14.4
चंद्र	2	16	0.0
मंगल	1	23	4.8
राहु	4	16	19.2
गुरु	4	1	14.4
योग	**30**	**12**	**0.0**

गुरु-बुध

	मा	दि	घं
बुध	3	25	14.4
केतु	1	17	14.4
शुक्र	4	16	0.0
सूर्य	1	10	19.2
चंद्र	2	8	0.0
मंगल	1	17	14.4
राहु	4	2	9.6
गुरु	3	18	19.2
शनि	4	9	4.8
योग	**27**	**6**	**0.0**

गुरु-केतु

	मा	दि	घं
केतु	0	19	14.4
शुक्र	1	26	0.0
सूर्य	0	16	19.2
चंद्र	0	28	0.0
मंगल	0	19	14.4
राहु	1	20	9.6
गुरु	1	14	19.2
शनि	1	23	4.8
बुध	1	17	14.4
योग	**11**	**6**	**0.0**

गुरु-शुक्र

	मा	दि	घं
शुक्र	5	10	0
सूर्य	1	18	0
चंद्र	2	20	0
मंगल	1	26	0
राहु	4	24	0
गुरु	4	8	0
शनि	5	2	0
बुध	4	16	0
केतु	1	26	0
योग	**32**	**0**	**0**

गुरु-सूर्य

	मा	दि	घं
सूर्य	0	14	9.6
चंद्र	0	24	0.0
मंगल	0	16	19.2
राहु	1	13	4.8
गुरु	1	8	9.6
शनि	1	15	14.4
बुध	1	10	19.2
केतु	0	16	19.2
शुक्र	1	18	0.0
योग	**9**	**18**	**0.0**

गुरु-चंद्र

	मा	दि	घं
चंद्र	1	10	0
मंगल	0	28	0
राहु	2	12	0
गुरु	2	4	0
शनि	2	16	0
बुध	2	8	0
केतु	0	28	0
शुक्र	2	20	0
सूर्य	0	24	0
योग	**16**	**0**	**0**

गुरु-मंगल

	मा	दि	घं
मंगल	0	19	14.4
राहु	1	20	9.6
गुरु	1	14	19.2
शनि	1	23	4.8
बुध	1	17	14.4
केतु	0	19	14.4
शुक्र	1	26	0.0
सूर्य	0	16	19.2
चंद्र	0	28	0.0
योग	**11**	**6**	**0.0**

गुरु-राहु

	मा	दि	घं
राहु	4	9	14.4
गुरु	3	25	4.8
शनि	4	16	19.2
बुध	4	2	9.6
केतु	1	20	9.6
शुक्र	4	24	0.0
सूर्य	1	13	4.8
चंद्र	2	12	0.0
मंगल	1	20	9.6
योग	**28**	**24**	**0.0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(शनि प्रत्यंतर्दशा – 19 वर्ष)

शनि अंतर्दशा

शनि-शनि	मा	दि	घं	शनि-बुध	मा	दि	घं	शनि-केतु	मा	दि	घं
शनि	5	21	11.4	बुध	4	17	6.6	केतु	0	23	6.6
बुध	5	3	10.2	केतु	1	26	12.6	शुक्र	2	6	12.0
केतु	2	3	4.2	शुक्र	5	11	12.0	सूर्य	0	19	22.8
शुक्र	6	0	12.0	सूर्य	1	18	10.8	चंद्र	1	3	6.0
सूर्य	1	24	3.6	चंद्र	2	20	18.0	मंगल	0	23	6.6
चंद्र	3	0	6.0	मंगल	1	26	12.6	राहु	1	29	20.6
मंगल	2	3	4.2	राहु	4	25	8.4	गुरु	1	23	4.8
राहु	5	12	10.8	गुरु	4	9	4.8	शनि	2	3	4.1
गुरु	4	24	9.6	शनि	5	3	10.2	बुध	1	26	12.5
योग	**36**	**3**	**0.0**	**योग**	**32**	**9**	**0.0**	**योग**	**13**	**9**	**0.0**

शनि-शुक्र	मा	दि	घं	शनि-सूर्य	मा	दि	घं	शनि-चंद्र	मा	दि	घं
शुक्र	6	10	0	सूर्य	0	17	2.4	चंद्र	1	17	12
सूर्य	1	27	0	चंद्र	0	28	12.0	मंगल	1	3	6
चंद्र	3	5	0	मंगल	0	19	22.8	राहु	2	25	12
मंगल	2	6	12	राहु	1	21	7.2	गुरु	2	16	0
राहु	5	21	0	गुरु	1	15	14.4	शनि	3	0	6
गुरु	5	2	0	शनि	1	24	3.6	बुध	2	20	18
शनि	6	0	12	बुध	1	18	10.8	केतु	1	3	6
बुध	5	11	12	केतु	0	19	22.8	शुक्र	3	5	0
केतु	2	6	12	शुक्र	1	27	0.0	सूर्य	0	28	12
योग	**38**	**0**	**0**	**योग**	**11**	**12**	**0.0**	**योग**	**19**	**0**	**0**

शनि-मंगल	मा	दि	घं	शनि-राहु	मा	दि	घं	शनि-गुरु	मा	दि	घं
मंगल	0	23	6.6	राहु	5	3	21.6	गुरु	4	1	14.4
राहु	1	29	20.4	गुरु	4	16	19.2	शनि	4	24	9.6
गुरु	1	23	4.8	शनि	5	12	10.8	बुध	4	9	4.8
शनि	2	3	4.2	बुध	4	25	8.4	केतु	1	23	4.8
बुध	1	26	12.6	केतु	1	29	20.4	शुक्र	5	2	0.0
केतु	0	23	6.6	शुक्र	5	21	0.0	सूर्य	1	15	14.4
शुक्र	2	6	12.0	सूर्य	1	21	7.2	चंद्र	2	16	0.0
सूर्य	0	19	22.8	चंद्र	2	25	12.0	मंगल	1	23	4.8
चंद्र	1	3	6.0	मंगल	1	29	20.4	राहु	4	16	19.2
योग	**13**	**9**	**0.0**	**योग**	**34**	**6**	**0.0**	**योग**	**30**	**12**	**0.0**

विंशोत्तरी दशा—प्रत्यंतर्दशा

(बुध प्रत्यंतर्दशा – 17 वर्ष)

बुध अंतर्दशा

बुध-बुध

	मा	दि	घं
बुध	4	2	19.8
केतु	1	20	13.8
शुक्र	4	24	12.0
सूर्य	1	13	8.4
चंद्र	2	12	6.0
मंगल	1	20	13.8
राहु	4	10	1.2
गुरु	3	25	14.4
शनि	4	17	6.6
योग	**28**	**27**	**0.0**

बुध-केतु

	मा	दि	घं
केतु	0	20	19.8
शुक्र	1	29	12.0
सूर्य	0	17	20.4
चंद्र	0	29	18.0
मंगल	0	20	19.8
राहु	1	23	13.2
गुरु	1	17	14.4
शनि	1	26	12.6
बुध	1	20	13.8
योग	**11**	**27**	**0.0**

बुध-शुक्र

	मा	दि	घं
शुक्र	5	20	0
सूर्य	1	21	0
चंद्र	2	25	0
मंगल	1	29	12
राहु	5	3	0
गुरु	4	16	0
शनि	5	11	12
बुध	4	24	12
केतु	1	29	12
योग	**34**	**0**	**0**

बुध-सूर्य

	मा	दि	घं
सूर्य	0	15	7.2
चंद्र	0	25	12.0
मंगल	0	17	20.4
राहु	1	15	21.6
गुरु	1	10	19.2
शनि	1	18	10.8
बुध	1	13	8.4
केतु	0	17	20.4
शुक्र	1	21	0.0
योग	**10**	**6**	**0.0**

बुध-चंद्र

	मा	दि	घं
चंद्र	1	12	12
मंगल	0	29	18
राहु	2	16	12
गुरु	2	8	0
शनि	2	20	18
बुध	2	12	6
केतु	0	29	18
शुक्र	2	25	0
सूर्य	0	25	12
योग	**17**	**0**	**0**

बुध-मंगल

	मा	दि	घं
मंगल	0	20	19.8
राहु	1	23	13.2
गुरु	1	17	14.4
शनि	1	26	12.6
बुध	1	20	13.8
केतु	0	20	19.8
शुक्र	1	29	12.0
सूर्य	0	17	20.4
चंद्र	0	29	18.0
योग	**11**	**27**	**0.0**

बुध-राहु

	मा	दि	घं
राहु	4	17	16.8
गुरु	4	2	9.6
शनि	4	25	8.4
बुध	4	10	1.2
केतु	1	23	13.2
शुक्र	5	3	0.0
सूर्य	1	15	21.6
चंद्र	2	16	12.0
मंगल	1	23	13.2
योग	**30**	**18**	**0.0**

बुध-गुरु

	मा	दि	घं
गुरु	3	18	19.2
शनि	4	9	4.8
बुध	3	25	14.4
केतु	1	17	14.4
शुक्र	4	16	0.0
सूर्य	1	10	19.2
चंद्र	2	8	0.0
मंगल	1	17	14.4
राहु	4	2	9.6
योग	**27**	**6**	**0.0**

बुध-शनि

	मा	दि	घं
शनि	5	3	10.2
बुध	4	17	6.6
केतु	1	26	12.6
शुक्र	5	11	12.0
सूर्य	1	18	10.8
चंद्र	2	20	18.0
मंगल	1	26	12.6
राहु	4	25	8.4
गुरु	4	9	4.8
योग	**32**	**9**	**0.0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(केतु प्रत्यंतर्दशा – 17 वर्ष)

केतु अंतर्दशा

केतु-केतु

	मा	दि	घं
केतु	0	8	13.8
शुक्र	0	24	12.0
सूर्य	0	7	8.4
चंद्र	0	12	6.0
मंगल	0	8	13.8
राहु	0	22	1.2
गुरु	0	19	14.4
शनि	0	23	6.6
बुध	0	20	19.8
योग	**4**	**27**	**0.0**

केतु-शुक्र

	मा	दि	घं
शुक्र	2	10	0
सूर्य	0	21	0
चंद्र	1	5	0
मंगल	0	24	12
राहु	2	3	0
गुरु	1	26	0
शनि	2	6	12
बुध	1	29	12
केतु	0	24	12
योग	**14**	**0**	**0**

केतु-सूर्य

	मा	दि	घं
सूर्य	0	6	7.2
चंद्र	0	10	12.0
मंगल	0	7	8.4
राहु	0	18	21.6
गुरु	0	16	19.2
शनि	0	19	22.8
बुध	0	17	20.4
केतु	0	7	8.4
शुक्र	0	21	0.0
योग	**4**	**6**	**0.0**

केतु-चंद्र

	मा	दि	घं
चंद्र	0	17	12.0
मंगल	0	12	6.0
राहु	1	1	12.0
गुरु	0	28	0.0
शनि	1	3	6.0
बुध	0	29	18.8
केतु	0	12	6.0
शुक्र	1	5	0.0
सूर्य	0	10	12.0
योग	**7**	**0**	**0.0**

केतु-मंगल

	मा	दि	घं
मंगल	0	8	13.8
राहु	0	22	1.2
गुरु	0	19	14.4
शनि	0	23	6.6
बुध	0	20	19.8
केतु	0	8	13.8
शुक्र	0	24	12.0
सूर्य	0	7	8.4
चंद्र	0	12	6.0
योग	**4**	**27**	**0.0**

केतु-राहु

	मा	दि	घं
राहु	1	26	16.8
गुरु	1	20	9.6
शनि	1	29	20.4
बुध	1	23	13.2
केतु	0	22	1.2
शुक्र	2	3	0.0
सूर्य	0	18	21.6
चंद्र	1	1	12.0
मंगल	0	22	1.2
योग	**12**	**18**	**0.0**

केतु-गुरु

	मा	दि	घं
गुरु	1	14	19.2
शनि	1	23	4.8
बुध	1	17	14.4
केतु	0	19	14.4
शुक्र	1	26	0.0
सूर्य	0	16	19.2
चंद्र	0	28	0.0
मंगल	0	19	14.4
राहु	1	20	9.6
योग	**11**	**6**	**0.0**

केतु-शनि

	मा	दि	घं
शनि	2	3	4.2
बुध	1	26	12.6
केतु	0	23	6.6
शुक्र	2	6	12.0
सूर्य	0	19	22.8
चंद्र	1	3	6.0
मंगल	0	23	6.6
राहु	1	29	20.4
गुरु	1	23	4.8
योग	**13**	**9**	**0.0**

केतु-बुध

	मा	दि	घं
बुध	1	20	13.8
केतु	0	20	19.8
शुक्र	1	29	12.0
सूर्य	0	17	20.4
चंद्र	0	29	18.0
मंगल	0	20	19.8
राहु	1	23	13.2
गुरु	1	17	14.4
शनि	1	26	12.6
योग	**11**	**27**	**0.0**

विंशोत्तरी दशा–प्रत्यंतर्दशा

(शुक्र प्रत्यंतर्दशा – 17 वर्ष)

शुक्र अंतर्दशा

शुक्र-शुक्र

	मा	दि	घं
शुक्र	6	20	0
सूर्य	2	0	0
चंद्र	3	10	0
मंगल	2	10	0
राहु	6	0	0
गुरु	5	10	0
शनि	6	10	0
बुध	5	20	0
केतु	2	10	0
योग	**40**	**0**	**0**

शुक्र-सूर्य

	मा	दि	घं
सूर्य	0	18	0
चंद्र	1	0	0
मंगल	0	21	0
राहु	1	24	0
गुरु	1	18	0
शनि	1	27	0
बुध	1	21	0
केतु	0	21	0
शुक्र	2	0	0
योग	**12**	**0**	**0**

शुक्र-चंद्र

	मा	दि	घं
चंद्र	1	20	0
मंगल	1	5	0
राहु	3	0	0
गुरु	2	20	0
शनि	3	5	0
बुध	2	25	0
केतु	1	5	0
शुक्र	3	10	0
सूर्य	1	0	0
योग	**20**	**0**	**0**

शुक्र-मंगल

	मा	दि	घं
मंगल	0	24	12
राहु	2	3	0
गुरु	1	26	0
शनि	2	6	12
बुध	1	29	12
केतु	0	24	12
शुक्र	2	10	0
सूर्य	0	21	0
चंद्र	1	5	0
योग	**14**	**0**	**0**

शुक्र-राहु

	मा	दि	घं
राहु	5	12	0
गुरु	4	24	0
शनि	5	21	0
बुध	5	3	0
केतु	2	3	0
शुक्र	6	0	0
सूर्य	1	24	0
चंद्र	3	0	0
मंगल	2	3	0
योग	**36**	**0**	**0**

शुक्र-गुरु

	मा	दि	घं
गुरु	4	8	0
शनि	5	2	0
बुध	4	16	0
केतु	1	26	0
शुक्र	5	10	0
सूर्य	1	18	0
चंद्र	2	20	0
मंगल	1	26	0
राहु	4	24	0
योग	**32**	**0**	**0**

शुक्र-शनि

	मा	दि	घं
शनि	6	0	12
बुध	5	11	12
केतु	2	6	12
शुक्र	6	10	0
सूर्य	1	27	0
चंद्र	3	5	0
मंगल	2	6	12
राहु	5	21	0
गुरु	5	2	0
योग	**38**	**0**	**0**

शुक्र-बुध

	मा	दि	घं
बुध	4	24	12
केतु	1	29	12
शुक्र	5	20	0
सूर्य	1	21	0
चंद्र	2	25	0
मंगल	1	29	12
राहु	5	3	0
गुरु	4	16	0
शनि	5	11	12
योग	**34**	**0**	**0**

शुक्र-केतु

	मा	दि	घं
केतु	0	24	12
शुक्र	2	10	0
सूर्य	0	21	0
चंद्र	1	5	0
मंगल	0	24	12
राहु	2	3	0
गुरु	1	26	0
शनि	2	6	12
बुध	1	29	12
योग	**14**	**0**	**0**

विशेष : पंचांग में उल्लिखित दशाओं के हर महीने में 30 दिन और वर्ष में 360 दिन होते हैं।

अध्याय-3

सूर्य दशा का नैसर्गिक फल

सूर्य की महादशा में विदेश यात्रा, विदेश वास, भूमि, राजद्वार, ब्राह्मण, अग्नि, शस्त्र तथा औषधि से धन हानि या प्राप्ति होती है। जातक की रुचि यन्त्र, मन्त्र में बढ़ती है। राज पुरुषों राजनीतिज्ञों अधिकारियों से मित्रता बढ़ती है। भाई–बन्धुओं से शत्रुता, स्त्री, पुत्र या पिता से वियोग या चिन्ता, व्यथा, नेत्र, दाँत तथा उदर में विकार पीड़ा, गो धन, पशु धन एवं नौकरी में हानि होती है।

स्वः काटवे के अनुसार सूर्य की महादशा मूलतः अशुभ होती है। किन्तु लग्न, पंचम, दशम तथा व्यय भाव में स्थित रवि की दशा उत्तम होती है। अन्य स्थानों में अशुभ होती है। सूर्य की महादशा में शनि, मंगल तथा चंद्र की अन्तर्दशाएं अशुभ होती हैं। अग्नि तत्व राशियों में सूर्य का फल अत्यन्त अशुभ रहता है। मेष में अत्यन्त बुरा, सिंह में मध्यम व धनु में तुलानात्मक शुभ फल रहता है। वृष, कन्या और मकर (पृथ्वी तत्व) राशियों में स्थित सूर्य का फल मामूली मिलता है।

वायुतत्व राशियों (मिथुन, तुला एवं कुम्भ) में सूर्य का फल तुलनात्माक अच्छा फल मिलता है। जल तत्व राशियों (कर्क, वृश्चिक एवं मीन) में मामूली फल प्राप्त होते हैं। हमें सूर्य के उच्च, नीच, स्वगृही, शत्रु गृही, मित्रगृही, वर्गों में स्थिति, युति, दृष्टि आदि का ध्यान रखकर सूर्य के बल का अनुमान लगा कर फल कहना चाहिए।

भिन्न–भिन्न भाव गत सूर्य दशा का फल

लग्न में दांत, नेत्र रोग, धन हानि, राजा का कोप।

द्वितीय भावः सन्तान उत्पत्ति, पुत्र सन्ताप, झगड़ा, स्त्री और धन की हानि, भूमि एवं वाहन का नाश होता है।

तृतीय भावः राज सम्मान, धन प्राप्ति, आनन्द व पराक्रम में उन्नति होती है।

चतुर्थ भावः स्त्री, सन्तान, मित्र बन्धु, भूमि, वाहनादि की हानि, अग्नि, विष, शस्त्र व चोर से भय होता है।

पंचम भाव: व नवम भाव: जातक का मन दु:खी रहता है। पिता की मृत्यु, अपमान आदि।
षष्ठ भाव: शत्रु से धन लाभ, क्षय, मूत्रकृच्छता, उदर रोग, जननेन्द्रिय गलित रोग होते हैं।
सप्तम भाव: स्त्री को रोग, उसकी मृत्यु, भोजन प्राप्ति में कठिनाई तथा अनेक असुविधाएँ होती हैं।
अष्टम भाव: परदेश गमन, रोग, ज्वर, नेत्र रोग, दाँत, उदर रोगों की सम्भावना होती है।
नवम भाव: पिता की मृत्यु, राज पक्ष से अपमान, अवनति, व्यर्थ का भ्रमण, धर्म कार्य में अरुचि होती है।
दशम भाव: राज सम्मान, अधिकार की प्राप्ति कार्य सफलता आदि होती है।
एकादश भाव: धन व पद की प्राप्ति, उत्तम कार्यों में अभिरुचि, निरोगता मिलती होती है। स्त्री, पुत्र वाहन, भूमि आदि का सुख प्राप्त हाता है।
द्वादश भाव: विदेश भ्रमण, धन, पुत्र मात पिता भूमि आदि की हानि होती है। विष, चोर अग्नि, शस्त्र का भय, नेत्र एवं पैरों में रोग होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूर्य का 3, 6, 10, 11 भाव में शुभ फल मिलता है। इस पर भी सूर्य की अवस्था, युति एवं दृष्टि का ध्यान रखना चाहिये।

सूर्य की दशान्तर्दशा में माता–पिता को रोग व कष्ट, मानिसक व्यथा एवं अधिक व्यय होता है। दशा के मध्य मे पशुधन व धन की हानि तथा मानसिक पीड़ा होती है। दशा के अन्त में विद्या जनित उन्नति व सुख प्राप्त होता है।

1. सूर्य/सूर्य (अवधि 0 वर्ष 3 मास 18 दिन)

राज सम्मान मिले। धन की प्राप्ति हो। वन पर्वतों पर वास हो। पित्त व ज्वर से पीड़ा, पिता का वियोग भी होना संभव है। सूर्य राजा प्रशासन व सरकार के साथ पिता का भी कारक है। सूर्य शुभ होने पर (केन्द्र/त्रिकोण,उच्च, स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोण, मित्र के साथ) शुभ फल देगा। सूर्य दुर्बल या दु:स्थान (षष्ठ, अष्ट, द्वादश भाव) में होने पर अनिष्ट फल देगा।

सूर्य/चंद्र (अविध 6 मास)

शत्रु पर विजय मिले। कष्ट व परेशानियाँ मिट जाए। धन मिले। कृषि (बागवानी से लाभ। सुन्दर घर प्राप्त हो। मित्रों से समागम हो। यदि चंद्रमा पापी हो तो धन हानि, मानिसक क्लेश व जल तथा अग्नि से भय हो सकता है।

सूर्य/मंगल

रोग, पदच्युति (अवनति), शत्रु से भय व पीड़ा हो। अपने कुल के लोगों से वैर, विरोध तथा राजा से भय होता है। कभी चोट लगती है व धन हानि भी होती है। ध्यान रहे सूर्य व मंगल दोनों ही क्रूर ग्रह होने से कष्टकारी हो जाते हैं किन्तु यदि सूर्य व मंगल परस्पर (केन्द्र त्रिकोण) इष्ट राशि में हों तो निश्चय ही शुभ फल प्राप्त होगा–सर्वत्र विजय, सफलता व प्रतिष्ठा मिलेगी।

सूर्य/राहु

शत्रु सिर उठाएं, वैर विरोध बढ़े, घर में चोरी या धन की हानि हो। आपत्तियाँ/मुसीबत आये। नेत्र व सिर में पीड़ा। सांसारिक भोगों के प्रति आकर्षण व आसक्ति बढ़ेगी। सूर्य सतोगुणी ग्रह है, किंतु राहु म्लेच्छ होने के साथ सूर्य का प्रबल शत्रु व महान पापी है। जैसे राजपाट छिनजाने पर पापी शत्रु के चंगुल में फंसे एक राजा की दुर्दशा होती है कुछ वैसी ही परिस्थितियों की कल्पना विज्ञ जन कर लें।

सूर्य/गुरु

शत्रुओं का नाश हो, शत्रु दुमदबाकर भागे। बहुविध लाभ व धन की प्राप्ति होगी। देवता व ब्राह्मण की सेवा, सहायता से सुख समृद्धि मिले। गुरु व बन्धुओं से स्नेह, सत्कार मिले। गुरु पापी होने पर कान में पीड़ा अथवा कर्ण रोग तथा तपेदिक, दमा दे सकता है। गुरु श्रवण सुख है।

सूर्य/शनि

स्त्री को रोग, पुत्र वियोग, किसी गुरुजन (गुरु, पिता, चाचा, ताऊ) की मृत्यु हो सकती है। बहुत अधिक व्यय व धन की हानि होती है। शनि यों तो सूर्य का पुत्र हैं किंतु अपने पिता (सूर्य) का प्रबल शत्रु व विरोधी है। सूर्य राजा है तो शनि सेवक/दास है। वह सतोगुणी है तो शनि तमोगुणी व गंदगी पसंद है। जातक इस अवधि में मैला कुचैला व गंदी बस्ती में रहना पसंद करता है। कभी वात पित्त जनित रोग व पीड़ा भी होती है।

सूर्य/बुध

बुध एक सौम्य ग्रह है, किंतु सूर्य क्रूर है। अतः इस अवधि में चर्म रोग फोड़े, फुंसी, कुष्ठ पीलिया की संभावना बढ़ती है। पेट व कमर में पीड़ा होती है। वात–पित्त–कफ जन्य रोग व पीड़ा हो सकती है।

सूर्य/केतु

मित्र से वियोग/बिछुड़ना हो। अपने सहयोगी व कुटुंबी जन से मतभेद जन्म क्लेश हो। शत्रु से भय व धन नाश की संभावना बढ़े। सिर व पैर में दर्द, या गुरु जन को रोग व पीड़ा हो। राहु सरीखा केतु भी पापी व सूर्य का प्रबल शत्रु है– इस कारण अशुभ फल अधिक मिलते हैं।

सूर्य/शुक्र

सिर में पीड़ा, पेट में रोग, या बवासीर से कष्ट हो। कृषि कार्य, भूमि, भवन, अन्न संतान सुख में कमी का अनुभव करे। स्त्री व संतान को रोग होना संभव है। शुक्र दैत्य, गुरु, रजोगुणी, भोग प्रदायक होने के साथ सूर्य का शत्रु भी है। शत्रु की अन्तर्दशा में धन नाश व स्वजन कष्ट सामान्य बात है।

टिप्पणी

सूर्य भले ही क्रूर हो, किंतु पापी नहीं है। ये एक सात्विक, ऊर्जा, प्रधान ग्रह है जिसके चारों ओर सभी ग्रह परिक्रमा करते हैं। यह प्राणदाता, जीवन दाता, ग्रह सूर्य जातक की आत्मा है जो नाना प्रकार की योनियों में विभिन्न देह एवं घर का संसार में विचरती है। सुदर्शन पद्धति में जन्म लग्न, चंद्र लग्न के साथ सूर्य लग्न को भी महत्त्व दिया गया है। अतः जातक का स्वास्थ्य, उसके सुख–दुःख, कार्यक्षमता आचरण, यश अपयश व हानि लाभ भी सूर्य से प्रभावित होते हैं ये स्मरण रखना चाहिए। सूर्य प्रधान जातक अन्तमुर्खी होकर आत्मा का विवचेन करते है। इसलिए सूर्य के समय आत्मा का विकास होता है तथा सूर्य सात्विक होता है।

अध्याय–4

चंद्रमा का नैसर्गिक फल

चंद्र की महादशा में जातक को युवती स्त्रियां, धन, भूमि पुष्प गन्ध वस्त्र एवं आभूषणों की प्राप्ति होती है। जातक को मंत्र वेद तथा ब्राह्मणों में रुचि होती है। राजपक्ष से लाभ, सम्मान व पद प्राप्त होता है। जातक इधर–उधर भ्रमण में प्रेम करता है। विद्युत व चुम्बकीय प्रवाह, माता का दूध, रेवले अधिकारी, जहाजों के कारखाने, दवाई की दुकान, पेटेंट दवाइयां, किराना की दुकाने, दूध के डेअरी, विमान, चावल, कपास, सफेद वस्त्र आदि में जातक रुची लेता है। स्व काटवे के अनुसार मेष, तुला, वृश्चिक और मीन राशियों में चंद्रमा के फल उत्तम होते हैं। मिथुन, सिंह एवं धनु–राशियों में साधारण फल होते हैं। वृष, कर्क, कन्या एवं मकर राशि में अशुभ फल प्राप्त होते है। वृष में अत्यन्त अशुभ फल और वृश्चिक में अत्यन्त शुभ फल प्राप्त होते हैं। पुरुष राशियों में चंद्रमा कुम्भ राशि में अच्छा नहीं है। स्त्री राशियों में मीन राशि में चंद्रमा अच्छा है।

यह श्री काटवे का अपना अनुभव है जो हमें ध्यान में रखना चाहिये। परन्तु महर्षि पाराशर, मन्त्रेश्वर आदि ने अवस्था के अनुसार फल कहा है। इसलिये चंद्रमा का पक्ष बल, भाव ग्रह बल, वर्गीय बल तथा अवस्था का ध्यान रखना चाहिये।

भिन्न–भिन्न भाव गत चंद्रमा दशा का फल

लग्न भावः– अग्नि तत्व राशियों में (मेष, सिंह, धनु)

जातक कम बोलने वाला, कार्यकर्त्ता कामेच्छा तीव्र, स्थिर क्रोधी पैसे के विषय में बेफिक्र होता है। धनुराशि में संसार सुख कम। पृथ्वी तत्व राशियां (वृष, कन्या एवं मकर) में जातक स्वयं को बहुत बड़ा विद्वान समझता है। किन्तु सभा में जाने से डरता है। वृष राशि में संसार सुख कम मिलता है। विवाह नहीं होता, यदि हुआ तो मध्यम आयु में पत्नी की मृत्यु, स्वभाव से दुष्ट व पर स्त्रियों में आसक्त होते हैं। वायुतत्व राशियों में जातक नेता होने की इच्छा रखता है। अपना लाभ न होते हुए भी दूसरों का नुकसान करता है। स्वार्थी होते है। जलतत्व राशियों (कर्क, वृश्चिक व मीन) जातक असंतुष्ट रहता है। दूसरे के कार्य में हाथ डालते।

द्वितीय भाव: जातक को स्त्री–पुत्र और धन से सुख तथा धन का लाभ होता है। उत्तम भोजन प्राप्त होता है। रति–सुख की प्राप्ति होती है। तीर्थ यात्रा होती है।

तृतीय भाव: भाईयों का सुख, वित्त लाभ, वस्त्र आभूषणों का लाभ–कृषि में उन्नति होती है। अच्छा भोजन प्राप्त होता है।

चतुर्थ भाव: माता की मृत्यु, भूमि, वाहन से सुख, कृषि तथा नवीन गृह का लाभ एवं प्रकाशन का कार्य होता है।

पंचम भाव: पुत्र लाभ, धन युक्त, विनीत होता है। लोगों से सम्मान प्राप्त होता है। बन्धुओं से विरोध उत्पन्न होता है।

षष्ठ भाव: जातक को दुःख, कलह, अपमान, वियोग मिलता है। अग्नि, जल, राजा से भय मूत्रकृच्छता रोग, शत्रु भय व धन नाश होता है।

सप्तम भाव: चंद्रमा की महादशा में स्त्री तथा पुत्रों से सुख तथा शैय्या सुख प्राप्त होता है।

अष्टम भाव: जातक कमजोर व रोगी होता है। जल से भय व बन्धुओं व मित्रों से विरोध होता है। विदेश यात्रा की सम्भावना होती है। माता तथा मातृपक्ष को कष्ट एवम् मृत्यु की सम्भावना भी रहती है।

नवम भाव: लोगों से सम्मान प्राप्त होते है। किन्तु स्वजनों से विरोध होता है। पुत्र लाभ, धन लाभ तथा धार्मिक कार्य करता है।

दशम भाव: कीर्ति, सम्मान तथा पद उन्नति होती है। धार्मिक कार्य करता है। भूमि, वस्त्र एवं वाहन सुख प्राप्त होता है।

एकादश भाव: अनेक प्रकार से वित्त लाभ, उत्तम भोजन, आभूषण, वस्त्र, वाहन सुख, कन्या लाभ एवं मन प्रसन्न रहता है।

द्वादश भाव: धन नाश तथा स्थान परिवर्तन होता है। जातक का मन दुःखी होता है।

चंद्र/चंद्र

पुत्री का जन्म, बहुमूल्य वस्त्र व आभूषण की प्राप्ति, ब्राह्मणों से समागम तथा माता की प्रसन्नता मिले। पत्नी का पूर्ण सुख मिले।

चंद्र / मंगल

देह में पित्त कुपित हो, रक्त दोष हो। शत्रु, चोर अथवा अग्नि से भय, मन में क्लेश व दुःख। धन व मान सम्मान की हानि हुआ करती है। यों तो मंगल चंद्र परस्पर मित्र हैं किन्तु चंद्रमा जल तत्व व कोमल भावनाओं का प्रतिनिधि है तो मंगल उग्रस्वभाव, अग्नि तत्व व संघर्ष/स्पर्धा का प्रतीक है। अतः मंगल अपनी अन्तर्दशा में अशुभ फल ही अधिक दिया करता है। सुख पाने के लिए झगड़ना पड़े या सुख में व्यवधान हुआ करता है।

चंद्र / राहु

मन को भयानक कष्ट व रोग हो। शत्रु वृद्धि व शत्रु जन्य पीड़ा हो। मित्र व बान्धव रोग ग्रस्त हों। प्राकृतिक (तूफान, बिजली, बाढ़) आपदाओं से क्लेश होता है, खान पान में गड़बड़ी से रोग व पीड़ा हो। चंद्रमा मन है, तो राहु प्रबल शत्रु है। अतः मन की सुख शांति नष्ट होगी व क्लेश बढ़ेगा।

चंद्रमा / गुरु

दया, दान तथा धर्म में प्रवृत्ति हो। राज सम्मान, मित्र समागम व वस्त्राभूषण की प्राप्ति से मन में प्रसन्नता बढ़े। चंद्रमा व गुरु के परस्पर संबंध से गज केसरी योग बनता है जो मान, प्रतिष्ठा, सुख समृद्धि, प्रसन्नता व सफलता का प्रतीक है।

चंद्रमा / शनि

रोग जनित कष्ट व पीड़ा हो। पुत्र, मित्र व स्त्री भी रोग पीड़ा भोगें। महान विपत्ति या अनिष्ट आशंका। चंद्रमा मन है तो शनि काल पुरुष का दुःख है। अतः मन का दुःखी, पीड़ित व अवसाद युक्त होना सहज है।

चंद्रमा / बुध

विविध धन–संपदा (भूमि, भवन, वाहन, रत्नाभूषण) की प्राप्ति हो। मन में सुख संतोष बढ़े। सत्कार्य व ज्ञान वृद्धि में मन लगे। बुध, विद्या अध्ययन विवेक, वाणी का कारक है। अतः ज्ञान व विवेक का आश्रम लेने से सुख शांति मिलेगी। मामा के सहयोग अनुग्रह से भी लाभ होगा।

चंद्रमा / केतु

मन में क्षोभ व अशान्ति तथा जल से भय हो। बंधु वियोग/विरोध व धन हानि हो। दास व सेवक संबंधी कष्ट व क्लेश मिले। केतु पाप ग्रह होने से मानसिक क्लेश बढ़ाया करता है।

चंद्रमा/शुक्र

वाहन का सुख मिले। स्त्री, धन, वस्त्राभूषण का सुख प्राप्त हो। क्रय–विक्रय (व्यापार), कृषि कर्म (उत्पादन उद्योग) से लाभ हो। पुत्र, मित्र, धन, धान्य से हर्ष हो। शुक्र कालपुरुष का धनेश व सप्तमेश है, तथा चंद्रमा मन है, चंद्रमा वृष में उच्चस्थ होता है, अतः धन प्राप्ति व स्त्री सुख होना सहज ही है।

चंद्रमा/सूर्य

राज सम्मान मिले। पराक्रम व शौर्य का यश मिले। रोग मिटे, स्वास्थ्य लाभ हो। शत्रु पराजित हो। सुख, सौभाग्य व सफलता मिले। सूर्य पापी होने पर वात पित्त से कष्ट तथा माता–पिता को रोग देता है। चंद्र मन व सूर्य आत्मा है तथा कालपुरुष के जन्मांग में सूर्य पंचमेश (त्रिकोणेश) होकर लग्न में उच्चस्थ है तो चंद्रमा सुखेश होकर धनभाव में है। अतः सुख–सम्मान तो मिलेगा ही। यों भी ग्रह परिषद में सूर्य राजा व चंद्रमा रानी है।

मंगल दशा का नैसर्गिक फल

साधारणतया मंगल की महादशा में निम्न नैसर्गिक फल प्राप्त होते हैं।

राजकीय क्षेत्र से, शत्रु से, शस्त्र बनाने से, झगड़ों से, औषधियों से, धूर्तता से, भूमि से, क्रूरता से, पशुओं से आदि अनेक प्रकार से धन प्राप्त होता है। (यह तब होगा जब मंगल शुभ भाव में, शुभ भाव का स्वामी होकर, शुभ युक्त या दृष्ट होकर बलवान हो।

यदि मंगल अशुभ हो तो पित्त जनित रक्त–विकार, ज्वर, दुर्घटनाएं होती हैं। चोर, राजा, अग्नि, दुर्घटनाओं से भय रहता है। घर में कलह, पुत्रों और सम्बन्धियों से विरोध रहता है। बंधन व व्रण रोग से कष्ट होता है।

पराशर मतानुसार मंगल केन्द्र व त्रिकोण का स्वामी हो तो शुभ तथा 3, 6, 8, 11, एवं 12 भाव का स्वामी हो तो अशुभ फल मिलता है। चंद्र या शुक्र के सम्बन्ध से मंगल दूषित हो जाता है।

अग्नि तत्व राशियों (मेष, सिंह एवं धनु) में क्रूर व साहसी मिथुन, तुला एवं कुम्भ (वायुतत्व) राशियों में प्रवासी एवं भाग्यहीन, वृष कन्या एवं मकर (पृथ्वी तत्व) राशियों में लोभी, स्वार्थी, दीर्घ द्वेषी, स्त्री प्रिय, झगड़ालू एवं शराबी या कुछ अन्य पदाथ का सेवन कर्क वृश्चिक एवं मीन (जल तत्व) राशियों में नाविक पियक्कड़, व्यभिचारी होता है। भोगी प्रवासी एवं धनवान, फल स्त्री राशियों का है।

विभिन्न भाव गत मंगल दशा का फल

लग्न भावः चोर, विष, कलह, शत्रुता एवं विदेश यात्रा की सम्भावना होती है।

द्वितीय भावः की वाणी में तीव्रता, धन एवं कृषि लाभ, किन्तु राज पक्ष से दंडित होता है। मुख व नेत्र में रोग की सम्भावना रहती है।

तृतीय भावः उत्साह, आनन्द, राज पक्ष से लाभ, धन, सन्तान, स्त्री, भाई–बहिनों से सुख मिलता है।

चतुर्थ भाव: स्थानच्युत, बन्धुओं से विरोध, चोर व अग्नि से भय एवं राज पक्ष से पीड़ित होता है।

पंचम भाव: स्त्रियों से विरोध, जातक को नेत्र रोग या दुःसाध्य रोग होता है। भाई दुखी रहता है।

षष्ठ भाव: स्त्रियों से विरोध, पदच्युति, शोक, विदेश भ्रमण, विपक्ष से वाद–विवाद होता है।

सप्तम भाव: स्त्री की मृत्यु, गुदा रोग, मूत्रकृच्छ गुप्त रोग आदि रोगों की सम्भावना रहती है।

अष्टम भाव: दुःख व स्त्री मृत्यु की सम्भावना रहती है। पद–च्युति होती है। विदेश यात्रा करनी पड़ती है। गुदा रोग, गुप्त रोगो का भय रहता है।

नवम भाव: पद की समाप्ति या परिवर्तन होता है। गुरुजनों को कष्ट तथा धार्मिक कार्यों में अरुचि या विघ्न होता है।

दशम भाव: उद्योग भंग, अपकीर्ति, स्त्री, पुत्र धन एवं विद्या का नाश होता है (अशुभ मंगल)।

एकादश भाव: राजकीय सम्मान, धन व सुख का लाभ होता है। लड़ाई में विजय, परोपकारी, सम्मान प्राप्त करता है।

द्वादश भाव: धन हानि, राज भय, भूमि, पुत्र एवं स्त्री नाश, एवं भाइयों की विदेश यात्रा होती है।

मंगल/मंगल

शरीर में गर्मी बढ़ने (पित्त प्रकोप) से कष्ट हो, शरीर को चोट लगे/घाव हो तथा छोटे भाइयों से वियोग/विग्रह (मतभेद) हो। जाति, बंधु से शत्रुता व राजा से विरोध हो। अग्नि या चोर का भय हो। मंगल सबल होने पर सफलता व संतोष देता है किन्तु पापी होने पर प्रायः शत्रु व भाइयों से कष्ट दिलाता है। (ध्यान रहे मंगल षष्ट भाव व तृतीय भाव का कारक है।

मंगल/राहु

शत्रु, शस्त्र, चोर व राजा से कष्ट मिले। गुरु जन या बन्धु की हानि/वियोग हो। जातक के सिर, नेत्र व बगल में रोग हो/मारक होने पर महान आपत्ति व मृत्यु भय भी देता है।

मंगल/गुरु

गुरु एक शुभ ग्रह है, व काल पुरुष का भाग्येश भोगेश होकर सुख स्थान में होने पर अत्यधिक शुभ प्रद माना गया है। जातक के पुत्र व मित्रों की वृद्धि हो। देवता व ब्राह्मण की उपासना से इष्टकार्य सिद्धि हो। अतिथि पूजा का सुअवसर मिले। तीर्थ यात्रा व पुण्य कर्मों के अवसर मिले। पापी गुरु होने से कान में रोग, पीड़ा व कफ जनित कष्ट होता है।

मंगल/शनि

शनि काल पुरुष का दुख है– अतः दुख तो होगा पर धीरज से काम लें। पुत्र, गुरु जन पितर गणों पर विपत्ति आती है। जातक स्वयं भी मुसीबतों व परेशानियों से घिरा रहता है। शत्रु धन हरण करते हैं। मन में गुप्त अनजानी पीड़ा रहती है। अग्निकांड या तूफान से क्षति होती है। वात पित्त जन्य रोग व कष्ट हो।

मंगल/बुध

काल पुरुष के जन्मांग में बुध, पराक्रमेश व षष्ठेश होकर छठे भाव में उच्चस्थ है अतः राजा या सरकार से कष्ट हो। शत्रु से भय, चोरी द्वारा धन हानि हो। पशु (वाहन) व सम्पत्ति की क्षति भी शत्रु के कारण होनी संभव है।

मंगल/केतु

कुछ मनीषियों ने केतु को शुभ माना है, किन्तु ये दशा प्रायः अप्रिय घटनाएं ही अधिक देती है। वज्राघात, अग्नि व शस्त्र से पीड़ा, धननाश, विदेश (परदेश) गमन या अपना देश छोड़ना पड़े, कभी तो स्वयं अपने या पत्नी के प्राणों को भी संकट होता है।

मंगल/शुक्र

काल पुरुष के जन्मांग में मंगल, लग्नेश अष्टमेश होकर दशमस्थ है तो शुक्र धनेश–सप्तमेश होकर द्वादश भाव में स्थित है। अतः इस दशा भुक्ति में स्वदेश छोड़कर विदेश में जाकर बसने की संभावना बढ़ जाती है। कभी बांए नेत्र में कष्ट होता है। चोरी होने से धन हानि व नौकरों को कष्ट व कमी भी होती है। यदि द्वादश भाव विदेश व बाएं नेत्र का प्रतीक है तो सप्तम भाव से दास–दासी व चोरी का विचार किया जाता है।

मंगल/सूर्य

संघर्ष/स्पर्धा में विजय मिले, समाज में मान प्रतिष्ठा व प्रभाव (दबदबा) बढ़े, राज सम्मान प्राप्त हो। लक्ष्मी की कृपा से धन, धान्य, वैभव विलास जनित सुख बढ़े। साहस व श्रम द्वारा धन की वृद्धि हो। कालपुरुष के जन्मांग में सूर्य उच्चस्थ होकर लग्न में है तो लग्नेश मंगल दशम भाव में उच्चस्थ है। अतः आत्मबल व सत्कर्म से सुख–वैभव की वृद्धि होना सहज संभव है।

मंगल/चंद्रमा

विविध प्रकार के धन व संपदाएं प्राप्त हों– रत्न–वस्त्र–आभूषण, पुत्र–पत्नी,भूमि भवन व वाहन का सुख मिले। शत्रु से मुक्ति मिले। शत्रु जनित भय व पीड़ा नष्ट हो जाए। कभी गुरु जन को पीड़ा तो कभी स्वयं को भी गुल्म व पित्त जन्य कष्ट हो सकता है। चंद्रमा को कालपुरुष के धन स्थान में उच्चस्थ होने से, धन प्रदाता माना जाता है। चंद्रमा काल पुरुष का मन है अतः सुख शान्ति व धन वैभव मिलना स्वाभाविक है।

अध्याय-6

राहु दशा का नैर्सिक फल

राहु एक छाया ग्रह है। इसका प्रभाव मानव जगत पर होने के कारण हमारे मनीषियों ने इसे भी ग्रहों में स्थान दिया है। कुछ आचार्यों के मत से राहु का स्वगृह कन्या एवं उच्च राशि मिथुन है– नीच राशि धनु है। अन्य आचार्यों के मत से राहु की उच्च राशि वृष, मूल त्रिकोण राशि कुम्भ तथा प्रिय राशि कर्क है। तथा अन्य गुण शनिवत है। राहु का शत्रु मंगल , शनि सम तथा शेष ग्रह मित्र है। अन्य मत से मंगल, सूर्य व चंद्रमा शत्रु ग्रह है।

राहु प्रधान व्यक्ति स्नेह शील प्रपंच में आसक्त होता है, स्वार्थ पूरा कर परोपकार करता है। मीन का इच्छुक, अभिमानी महत्वाकांक्षी होता है। बहुत बोलना नहीं चाहता, लेखन में सरस, तेजस्वी तथा काव्य पूर्ण होता है। वह दूसरों के काम में दखल नहीं देता एवं दूसरों के ,द्वारा अपने काम में दखल देना पसंद नहीं करता है।

कुण्डली में राहु अशुभ योग में हो (विषम भाव में विषम राशि में हो) तो जातक बुद्धि हीन, दुष्ट, स्वार्थी अविश्वनीय दुरभिमानी, झूठे आचारण से पूर्ण, निर्लज्ज, उद्दण्ड अपने मत को ही श्रेष्ठ मानने वाला, दूसरों को ताने देने वाला, दूसरों का अहित करने वाला होता है।

राहु की दृष्टि के बारे में भी मतभेद है। राहु की दृष्टि 5, 7, 9, 12 मानी गई है। परन्तु सप्तम व द्वादश दृष्टि ही अनुभव में आती है। सदा वक्री रहता है।

विभिन्न भावों में राहु दशा का फल

लग्न भावः जातक बुद्धिहीन, विष, अग्नि तथा शस्त्र से भय, बन्धु वर्ग से विरोध, पराजय व कष्ट पाता है।

द्वितीय भावः राज्य व धन की हानि, राजा से भय, निम्न व्यक्तियों की सेवा करनी पड़ती है। अच्छे भोजन का अभाव, मन में चिन्ता व क्रोध रहता है। कुटुम्ब में कलह रहता है।

तृतीय भावः सन्तान, स्त्री, धन व भाईयों से सुख प्राप्त होता है। विदेश में आना जाना रहता है।

चतुर्थ भावः माता को कष्ट या मृत्यु होती है। भूमि, कृषि, धन की हानि, राजा से भय, बधुओं से विरोध, स्त्री एवं पुत्र को रोग तथा मानसिक कष्ट रहता है।

पंचम भावः उन्माद, बुद्धिहीन झगड़ा, राजा से भय, सन्तान से कष्ट या नाश होता है।

षष्ठ भावः राजा, अग्नि, चोर व शत्रुओं से भय नाना प्रकार के रोग तथा मृत्यु भय रहता है।

सप्तम भावः विदेश यात्रा, भूमि, धन की हानि, नौकरी की कमी, सन्तान की चिन्ता तथा सर्प से भय होता है।

अष्टम भावः मृत्यु का भय, सन्तान का नाश, चोर, अग्नि एवं राजा से भय रहता है।

नवम भावः पिता की मृत्यु, विदेश यात्रा, बन्धु वर्ग, गुरुजनों को कष्ट, धन सन्तान की हानि होता है।

दशम भावः धार्मिक कार्य एवं गंगा स्नान आदि होता है। यदि राहु अशुभ हो तो विदेश वास व कलंकित होता है।

एकादश भावः सम्मान, धन, गृह, भूमि, तथा नाना प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।

द्वादश भावः विदेश यात्रा, स्त्री–पुत्र से वियोग, धन, भूमि आदि की हानि होती है।

यदि किसी जन्मांग में राहु कन्या (6) वृश्चिक (8) अथवा मीन (12) राशि में स्थित हो तो वह अपनी महादशा में उच्च अधिकार (हकूमत, बादशाहत) तथा वाहन वैभव जन्य सुख समृद्धि देकर दशा की समाप्ति तक सभी कुछ वापिस भी ले लेता है।

राहु/राहु

विष व जल से भय (दूषित जल के कारण रोग हो) हो, परस्त्री संग से अपयश, इष्टजन का वियोग व दुष्टजन से कष्ट, मन वाणी में कटुता क्रोध एवं क्रूरता बढ़े।

राहु/गुरु

जातक देवता व ब्राह्मण का पूजन करे। शरीर निरोग व स्वस्थ हो। सुन्दर स्त्रियों से समागम, विद्वत्ता पूर्ण विचार विनिमय व शास्त्र चिंतन में समय सुख पूर्वक बीते।

राहु/शनि

स्त्री–पुत्र–भाईयों से मतभेद एवं झगड़ा होता है। जातक की पदच्युति (स्थानान्तरण) नौकर से या नौकरी में बाधा/हानि हो। शरीर में चोट लगे, वात पित्त जन्य रोग से पीड़ा होती है। शनि काल पुरुष के लग्न में नीचस्थ होता है। अतः इसका दोषी होना सहज है। यदि राहु को तृतीयस्थ मानें तो भाइयों से, पुत्र–स्त्री से झगड़ा, दुःख क्लेश व देह पीड़ा होना भी स्वाभाविक है।

राहु/बुध

धन और पुत्र की प्राप्ति, मित्रों से समागम तथा चित्त में प्रसन्नता हो। बुद्धि में चतुराई व कुशलता की वृद्धि से कार्य सिद्धि व लाभ मिले। राहु व बुध परस्पर मित्र हैं। बुध व्यवहार कुशलता, वणिक, बुद्धि, व्यापार चातुर्य देकर मधुर वाणी से भी अपनी ओर आकर्षित करता है। कालपुरुष के जन्मांग में राहु बुध की राशि में स्थित है तथा कन्या राशि के बुध से (दशमस्थ) केन्द्र में है, अतः निश्चय ही कार्य में कुशलता–प्रवीणता से सुख बढ़ेगा ऐसा जानें।

राहु/केतु

राहु केतु परस्पर शत्रु माने गये हैं। अतः ये दशा ज्वर, अग्नि, शस्त्र व शत्रु जन्य भय दिया करती है। कभी सिर में रोग, शरीर में कंपन, विषया व्रण(घाव) से कष्ट होता है। मित्रों से कलह, गुरुजन की उदासीनता भी मनोवेदना व व्यथा बढ़ाती है।

राहु/शुक्र

स्त्री की अनुकूलता व सहवास सुख मिले। भूमि भवन वाहन व वैभव की प्राप्ति हो। अपने ही लोगों से वैर विरोध हो तथा जातक वात कफ जन्य रोगों से कष्ट पाये। काल पुरुष के जन्मांग में उच्चराशि का शुक्र द्वादश भाव (भोग भवन) में राहु से दशमस्थ (विपरीत गणना से चतुर्थस्थ) है। अतः सभी प्रकार के भोग मिलना स्वाभाविक है।

राहु/सूर्य

आपत्ति, विपत्ति शत्रुजन्य बाधा व कष्ट, विष/अग्नि पीड़ा, शस्त्राघात, नेत्र पीड़ा की संभावना बढ़े। राजा/सरकार से भय हो तथा स्त्री पुत्र को भी कष्ट मिले। राहु व सूर्य परस्पर शत्रु हैं। सूर्य आत्मा, राजा व सरकार का प्रतीक है। यदि कालपुरुष के जन्मांग में सूर्य लग्न में है तो राहु तृतीय भाव में होने से परस्पर 3–11 की स्थिति बनती है जो अशुभ मानी गयी है। अतः अशुभ फल होना सहज एवं स्वाभाविक है।

राहु/चंद्रमा

स्त्री सुख की हानि/नाश, स्वजन/परिजन से कलह व क्लेश हो। मन में चिंता संताप, मित्रों पर विपत्ति तथा जल से भय हो। कृषि, धन पशु व संतान को क्षति पहुँचे। चंद्रमा मन, मित्र, जल व मानसिक सुख शांति का प्रतीक है; तथा राहु प्रबल क्रूर शत्रु होकर कालपुरुष के जन्मांग में चंद्रमा से द्वितीय स्थान (मारक भाव) में स्थित है। यहाँ राहु मन की सुख शांति तथा मित्रादि के लिए मारक सरीखा कार्य करेगा।

राहु/मंगल

राजा (सरकार), अग्नि, चोर एवं अस्त्र से भय हो। देह या मन में रोग जनित पीड़ा हो। हृदय रोग, नेत्र पीड़ा व पदच्युति (स्थानहानि) की संभावना बढ़े।

मंगल कालपुरुष के जन्मांग में दशमस्थ है। अतः कार्य क्षेत्र, कार्यस्थल राजा (सरकार) से परेशानी होना सहज ही है। काल पुरुष के जन्मांग में राहु एक छाया ग्रह होकर (दशमस्थ) मंगल से षष्ठमस्थ होने से गुप्त रोग/पीड़ा दे सकता है। अतः अतिरिक्त सावधानी तथा जातक को स्नेह पूर्ण सेवा व सहयोग की आवश्यकता होगी।

अध्याय-7

बृहस्पति दशा का नैसर्गिक फल

यदि बृहस्पति शुभ व बलवान हो तो जातक को राज, मन्त्रित्व एवं मनोवांछित फल प्राप्त होता है। देवार्चन, धार्मिक कर्म करता है। वाहन, भूमि एवं वस्त्र का लाभ होता है। उत्तम मनुष्यों की संगति प्राप्त होती है। कुटुम्ब व अन्यों का भरण–पोषण करता है।

स्व काटवे के अनुसार मेष, मिथुन, सिंह, धनु व मीन राशि में बृहस्पति उत्तम फल देता है। तुला, वृश्चिक, मकर तथा कुम्भ राशियों में मध्यम फल तथा वृष, कन्या एवं कर्क राशि में अशुभ फल प्राप्त होते हैं। आयु के अन्तिम भाग में यशस्वी होते हैं। यदि बृहस्पति स्त्री राशि में या पीड़ित हो तो जातक आयु के आरम्भ में नौकरी करते है, बाद में स्वतन्त्र व्यवसाय होता है। किन्तु दशम स्थान में बृहस्पति हो तो जीवन भर नौकरी करनी पड़ती है। ये लोग स्कूल, कालेज, आश्रम आदि संस्थाएं स्थापित करते है। नगर पालिका, जिला बोर्ड, विधान सभा आदि में चुनाव लड़ते हैं।

यदि बृहस्पति पीड़ित हो तो मिथ्या अभिमानी, बार–बार व्यवसाय बदलना, दूसरों को तुच्छ समझते हैं। दूसरों की बुराइयां निकालते रहते हैं। पत्नी के साथ पांच मिनट तक स्थिरता से बात नहीं कर पाते, परन्तु अन्य स्त्रियों से घुलमिल कर घण्टों बिता देते हैं। अपने को बहुत सुशिक्षित समझते हैं। अन्य लोगों पर अपना प्रभाव जमाना चाहते हैं।

विभिन्न भाव गत बृहस्पति की दशा का फल

त्रिकोण व केद्र में स्थितः जातक धन, राजा, पुत्र व स्त्री से सुख पाता है। उच्च पद प्राप्त करता है।

लग्न भावः जातक धन, सम्मान व वस्त्र, आभूषण एवं वाहन प्राप्त करता है।

द्वितीय भावः राज–सम्मान व धन की प्राप्ति होती है। जातक बुद्धिमान, परोपकारी, सुखी, विजयी, वस्त्र आभूषण प्राप्त करता है।

तृतीय भावः भाई से धन व राजा के द्वारा सम्मान प्राप्त करता है।

चतुर्थ भावः वाहन सुख, राज्य–अधिकार, माता का सुख, स्त्री, बन्धुओं से सम्मान प्राप्त करता है।

पंचम भावः मंत्र–तंत्र विद्याओं में रुचि, बच्चे उत्पन्न होते हैं। बहुमुखी प्रतिभा वाला होता है।

षष्ठ भावः स्वास्थ्य व स्त्री प्राप्त होती है। अन्त में चोर, रोग व स्त्री से भय होता है।

सप्तम भावः स्त्री, पुत्र का सुख, विदेश भ्रमण एवं विजयी होता है। धार्मिक कार्य करता है।

अष्टम भावः आरम्भ में दुःख होता है, स्थानच्युत, विदेश यात्रा, बन्धुजनों से वियोग होता है। परन्तु अन्त में स्त्री, पुत्र तथा राजा से सम्मान प्राप्त होता है।

नवम भावः त्रिकोण भाव का फल प्राप्त होता है।

दशम भावः राज–अधिकार धन, स्त्री, पुत्र तथा शुभ की प्राप्ति होती है।

एकादश भावः पुत्र प्राप्ति, धन, बन्धुओं से सम्मान प्राप्त होता है।

द्वादश भावः नाना प्रकार के क्लेश और विदेश यात्रा होती है। वाहन सुख प्राप्त होता है। यदि बृहस्पति शुभ हो तो शुभ कार्यों में व्यय होता है।

गुरु/गुरु

सुख सौभाग्य में वृद्धि हो। समाज में मान प्रतिष्ठा व यश मिले। मुख व देह की कान्ति बढ़े। गुणों का विकास व प्रकाश हो। गुरु–संत जन से मिलन, मनोकामना सिद्धि, सरकार द्वारा गुणों का मूल्यांकन हो, प्रशंसा तथा पुरस्कार मिले। सर्वत्र सराहना हो।

गुरु/शनि

मद्यपान व वेश्याओं की संगति तथा सांसारिक सुख वैभव की प्राप्ति हो। सुरा–सुन्दरी पर धन का अपव्यय हो। कुटुम्बी व पशुओं को पीड़ा हो। नेत्र रोग, पुत्र पीड़ा, तथा मन में भय बना रहे। (भय व पीड़ा तो शनि का स्वभाव ही है। गुरु काल पुरुष का भोगेश है। तो शनि लाभेश है। अतः भोग में वृद्धि होगी। शनि सप्तस्थ होने से सुंदर वेश्याओं की संगति भी देगा।

गुरु/बुध

सुरा–सुन्दरी, द्यूत क्रीड़ा तथा वात पित्त कफ जनित रोग हों। बुध राजकुमार है, सुन्दर युवक व मधुर भाषी है, व्यवहार कुशल व चतुर है, स्वार्थ सिद्धि हेतु छल कपट भी कर बैठता है,

अतः भोग प्राप्ति के लिये जुआ व शराब का सहारा ले सकता है। अन्य मनीषियों का विचार है कि गुरु सात्विक व वेदनिष्ठ ब्राह्मण है यह ज्ञान, विवेक एवं प्रज्ञा का प्रतीक है। तो बुध बुद्धि व व्यवहार कुशलता है अतः इस अन्तर्दशा देवता एवं ब्राह्मण की पूजा उपासना से ही सभी सुख वैभव, पुत्र, धन व परिवार की सुख समृद्धि प्राप्त होगी।

गुरु/केतु

देह पर चोट/घाव, नौकरों से विरोध, स्त्री पुत्र को कष्ट तथा चित्त में व्यथा होती है। गुरुजन अथवा प्रियजन से वियोग बिछोह तथा कभी जातक को मृत्यु तुल्य कष्ट या प्राण हानि हो। इसे एक विडंबना ही कहा जाएगा कि काल पुरुष के जन्मांग में केतु त्रिकोण (नवम भाव) में गुरु की राशि में बैठा है, किंतु गुरु से षष्ठम है। दशानाथ–अन्तर्दशानाथ का परस्पर षष्ठम, अष्टम होना अशुभ व अनिष्ठकर माना गया है तथा रोग, शत्रु व घाव पीड़ा देने वाला है।

गुरु/शुक्र

अनेक प्रकार के धन–धान्य, वस्त्राभूषण, सुख सामग्री की प्राप्ति व वृद्धि हो। स्त्री–पुत्र का सुख मिले। स्वादिष्ट भोजन, उत्तम पेय का सुख मिले। देवता व ब्राह्मण की अर्चना, उपासना में जातक तत्पर रहे। (कालपुरुष के जन्मांग में शुक्र, भोगस्थान में उच्च का होकर गुरु की राशि में है तो गुरु भाग्येश भी है, अतः भाग से विविध प्रकार भोग–वैभाव की प्राप्ति होना स्वाभाविक है।

गुरु/सूर्य

शत्रु पर विजय, राजसम्मान, यशवृद्धि, धन लाभ व वाहन सुख मिले। प्रभाव व पुरुषार्थ में वृद्धि हो। महानगर में रहकर जातक उच्च कोटि के वैभव व सुख संपदा भोगें। (कालपुरुष के जन्मांग में गुरु सुख भाव में है तो सूर्य लग्न में उच्चस्थ है। लग्न सुख भाव के लिये दशम भाव है अतः कार्य क्षेत्र में उन्नति सफलता, मान–सम्मान की वृद्धि व मानसिक सुख मिलना सहज है।

गुरु/चंद्रमा

स्त्री व धन की प्राप्ति हो। यश वृद्धि व कृषि से लाभ मिले। व्यापार (क्रय–विक्रय) द्वारा लाभ मिले। देवता व ब्राह्मण की पूजा हो। (गुरु, चंद्रमा की राशि में उच्चस्थ होता है ये लाभ की नैसर्गिक कारक होने से निश्चय ही लाभ देगा, किन्तु धर्म विमुखता साधु–संत का अनादर

करने से कभी अपयश व मानसिक क्लेश भी दिया करता है ऐसी परिस्थिति में पत्नी से अनबन, स्त्री सुख की हानि, धन नाश भी हुआ करता है। अतः विज्ञ जन गजकेसरी योग की सार्थकता हेतु धार्मिक अनुष्ठान व देवोपासना का सुझाव दें।

गुरु/मंगल

जातक के कार्यों से बन्धुओं को सुख संतोष प्राप्त हो, शत्रुओं से भी जातक लाभ पायें। भूमि भवन की प्राप्ति हो। प्रभाव व प्रताप में वृद्धि हो। किसी गुरुजन को चोट लगे। जातक को नेत्र पीड़ा हो तथा सत्कर्म के प्रभाव से जातक सुख पाये। मंगल, बंधु, स्नेह व शत्रु से संघर्ष का प्रतीक है तो गुरु लाभ का। काल पुरुष के जन्मांग में गुरु चतुर्थ (सुख भाव) में है तो मंगल कर्म भाव में। अतः कर्म के प्रभाव से तथा कर्म के द्वारा जातक को सुख व सभी प्रकार के लाभ मिलेंगे।

गुरु/राहु

बंधुओं को/से कष्ट व संताप हो। मन में दुःख, चिन्ता व उद्विग्नता हो। रोग व चोर से भय। गुरुजन को कष्ट/जातक को उदर विकार हो। राजा से कष्ट पीड़ा या दंड मिले। शत्रु जनित कष्ट बढ़े। धन का नाश हो। गुरु, देवताओं का रक्षक व मंत्रदाता गुरु है; तो राहु देवताओं का प्रबल शत्रु है। अतः अशुभ फल होना स्वाभाविक है। काल पुरुष की कुंडली में राहु, गुरु से द्वादश होकर बंधु स्थान में है, अतः भाई बंधुओ के कारण सुख की हानि, घर परिवार में अशान्ति, मन में दुःख क्लेश भी होगा ही।

काल पुरुष की कुंडली

ये मात्र एक कल्पना है जिसमें सभी ग्रह उच्चस्थ मान कर सूर्य को लग्न में स्थापित किया गया है।

अध्याय-8
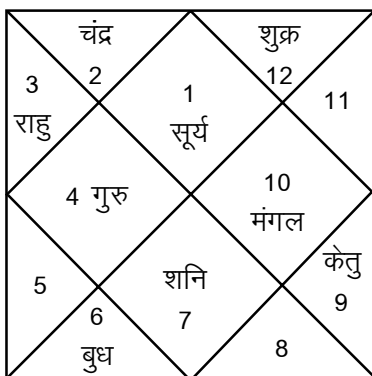
शनि दशा का नैसर्गिक फल

शास्त्रों के मतानुसार शनि यदि बलवान हो, उच्च का हो तो जातक ग्राम, देश या सभा का आधिपत्य प्राप्त करता है। उसे अनेक प्रकार से आनन्द प्राप्त होता है। किन्तु पिता की मृत्यु एवं बन्धुजनों से वैमनस्य होता है। यदि शनि पीड़ित हो, निर्बल हो या नीच हो तो देश परिवर्तन चिन्ता, व्यवसाय परिवर्तन, धन की हानि तथा राजा से विरोध होता है। नौकरी या किसी की अधीनता करनी पड़ती है।

सूर्य के साथ शनि हो तो उसकी दशा में स्वजनों से मतभेद पर स्त्री गमन नौकर या सन्तान से असन्तोष तथा प्राण क्रिया करने में तत्पर रहता है। यदि शुभ ग्रह के साथ हो तो बुद्धि का उदय राजपक्ष से भाग्योभति धन लाभ, खेती में उन्नति एवं काले–धन की प्राप्ति होती है। यदि पाप ग्रह के साथ या दृष्टि हो तो धन, स्त्री, सन्तान, नौकर की हानि होती है। लांछन लगता है।

शनि यदि शुभ है तो जातक गूढ़ विषयों की जड़ तक जाने का प्रयत्न करता है। परोपकारी, मिलनसार, राष्ट्रीय योगी, अनासक्त होता है। अपमान स्थिति में दीर्घकाल तक न रह कर स्वाभिमान की स्थिति में दो दिन में मरना अच्छा समझता है। यदि शनि पीड़ित है तो जातक स्वार्थी, धूर्त, दुष्ट, मनमानी करने वाला, आलसी एवं भद्र बुद्धि होता है। शनि वृष, कन्या और मकर में उत्पात करता है।

विभिन्न भावों में शनि दशा का फल

केन्द्र भावः कलह, पीड़ा, पुत्र, मित्र, स्त्री नौकर, धन व बन्धु का नाश होता है।

लग्न भावः शरीर में दुर्बलता, जननेन्द्रिय जनित रोग, स्थानच्युति, राज–भय, सिर के रोग, माता व मातृ पक्ष को कष्ट होता है।

द्वितीय भावः धन नाश, राज–भय, कर्मचारियों से विवाद, गुदा तथा नेत्र रोग होते हैं।

तृतीय भावः मन में उत्साह और सुख होता है। भाई–बहिनों को कष्ट, धन हानि होती है।

चतुर्थ भावः भ्रातृ वर्ग की हानि, घर जलने का भय, पदच्युति, राज्य तथा चोर से भय एव भ्रमण होता है।

पंचम भाव: सन्तान नाश, असन्तोष, राज्यभय, पुत्र तथा स्त्री से मतभेद होता है।

षष्ठ भाव: गृह व व्यवसाय की हानि, शत्रु, रोग, विष एवं चोर से भय होता है।

सप्तम भाव: नाना प्रकार के रोग, पीड़ा, स्त्री के कारण कष्ट होता है।

अष्टम भाव: धन, स्त्री, पुत्र, नौकर एवं पशुओं का नाश होता है। गुदा व आखों के रोग होते हैं।

नवम भाव: गुरु व पिता से वियोग, विदेश यात्रा एवं धार्मिक कार्यों में अरुचि होती है।

दशम भाव: पदच्युति, विदेश यात्रा, धार्मिक कार्यों में अरुचि, राजकोप व बन्धन होता है।

एकादश भाव: नाना प्रकार के सुख व सम्मान प्राप्त होते हैं। स्त्री, पुत्र, नौकरी से सुख प्राप्त होता है।

द्वादश भाव: अग्नि, चोर, राजा से भय रहता है। विदेश यात्रा तथा बन्धुओं से वियोग होता है।

शनि दु:ख का कारक ग्रह है इसलिए शनि के नकारात्मक गुणों का वर्णन किया है। परन्तु अनुभव में ऐसा नहीं। शनि जिस भाव में स्थित होता है उसकी वृद्धि करता है। उसमें बल होना चाहिये। शनि की दृष्टि अशुभ है।

शनि/शनि

कृषि में लाभ, दास दासी व पशुधन (भैंस) की वृद्धि हो। वात रोग से पीड़ा, शूद्र (श्रमिक वर्ग, निम्न वर्ग) से धन लाभ हो। देह में आलस्य व पाप वृत्ति बढ़े। प्रौढ़ा स्त्री का संग हो। (शनि ग्रह परिषद में दास है व कालपुरुष के जन्मांग में सप्तमस्थ होने से दास दासियों के सुख में वृद्धि करेगा, किंतु लग्न पर नीच दृष्टि के कारण शनि रोग व आलस्य भी दे सकता है।

शनि/बुध

सुख–सौभाग्य की वृद्धि, राज सम्मान मिले। मित्र व स्त्री से सुख समागम। वात–पित्त कफ से रोग व पीड़ा हो। जातक के भाई, बहन या पुत्र रोग ग्रस्त हों। (बुध हास्य व मनोरंजन प्रिय व शनि का मित्र है। काल पुरुष के जन्मांग में बुध तृतीयेश–षष्ठेश होकर षष्टम भाव में शनि से द्वादशस्थ है। अत: शैया सुख, मित्र सुख व सौभाग्य की वृद्धि होगी। तृतीयेश के षष्ठमस्थ होने से भाई–बहिन को रोग व पीड़ा होना भी सहज संभव है।

शनि/केतु

अग्नि व वायु प्रकोप से कष्ट, शत्रुओं से संताप मिले। स्त्री पुत्र से मतभेद व क्लेश हो। अशुभ व अप्रिय घटना घटे, सर्प भय हो। (शनि व केतु दोनों ही पापी हैं, केतु भाग्य भवन में शनि द्वारा दृष्ट है, अतः दुर्भाग्य जनित कष्ट बाधाएं मिलना स्वाभाविक है।

शनि/शुक्र

स्त्री पुत्र व मित्रों से सुख मिले व स्वयं जातक भी इन्हें सुखदयी लगे। समुद्र पार (आयात–निर्यात) से धन प्राप्त हो। यश व प्रभाव बढ़े। (कालपुरुष के जन्मांग में धनेश–सप्तमेश) शुक्र द्वादश (भोग, वैभव) में उच्चस्थ तथा सप्तम भाव का नैसर्गिक कारक होने से इस दशा भुक्ति में सुख, वैभव व भोग की वृद्धि होगी।

शनि/सूर्य

शत्रु या मृत्यु का भय हो। उदर विकार या नेत्र रोग हो। धन धान्य की हानि व गुरुजन को कष्ट होता है। (सूर्य, शनि का पिता है किन्तु शनि इस सूर्य से शत्रुवत् व्यवहार, अवज्ञा–अवमानना करता है। अतः शत्रु/मृत्यु का भय, रोग व हानि होना सहज संभव है। पिता पुत्र में सौमनस्य की कमी व कटुता भी अशक्य नहीं।

शनि/चंद्रमा

रोग व मृत्यु भय, स्त्री सुख की हानि, मित्रों पर विपत्ति व पीड़ा तथा जल व वायु के प्रकोप से हानि। दूषित जल द्वारा फैलने वाले अथवा वायु प्रदूषण से उत्पन्न रोग कष्ट दे सकते हैं। कभी बाढ़ या तूफान से भी तबाही हो जाती है। (चंद्रमा मन है तो शनि पीड़ा, अतः मन में अशान्ति, दुःख, अवसाद होना सहज संभव है। यों भी चंद्रमा द्वितीय व शनि सप्तमस्थ होने से मारक प्रभाव भी देगा। चंद्रमा स्वास्थ्य भी है, अतः शनि अस्वस्थ्यकर रोग की पीड़ा भी देगा।

शनि/मंगल

पदच्युति, नौकरी छूठे या पद से हटाया जाए। अपने ही लोगों से झगड़ा हो। ज्वर, ताप, शस्त्र, विष, रोग व शत्रु से भय व पीड़ा हो। हर्नियां से कष्ट या नेत्र रोग हो। शत्रुओं की वृद्धि हो। (काल पुरुष के जन्मांग में मंगल लग्नेश अष्टमेश होकर दशमस्थ है, अतः शनि का बुरा प्रभाव जातक की देह, आयु व कार्य क्षेत्र पर निश्चय ही पड़ेगा। मंगल व शनि शत्रु हैं, अतः शत्रुओं की वृद्धि व उनसे कष्ट मिलने की संभावना भी बढ़ेगी।)

शनि / राहु

जातक खराब रास्ते पर जाए (कुमार्गगामी हो), प्राणों का संकट हो। प्रमेह, गुल्म, चोट व ज्वर से कष्ट हो। शनि व राहु दोनों ही क्रूर ग्रह हैं, अतः ये अन्तर्दशा पीड़ा कारक तो होगी ही (राहु छाया होने से प्रायः अवश्य व गुप्त रुप से जातक की बुद्धि को प्रभावित कर उसे संकट में डाल देता है। शनि भी, सूर्य सरीखे पिता को त्यागकर, नीच संगति में प्रसन्न रहता है व दुःख देकर प्राणियों के पापकर्म का भोग करा कर उन्हें शुद्ध करना मानो शनि का सहज कर्म है। अतः दुःख से बचने के लिये धर्म का आश्रय लें।

शनि / गुरु

ये अन्तर्दशा बहुत शुभ व कल्याणकारी है। जातक की धर्म व भगवान में श्रद्धा होती है। वह देवता व ब्राह्मण के पूजन में रुचि लेता है। स्त्री पुत्र के साथ धन–धान्य का सुख भोगते हुए अपने ही घर में सुख पूर्वक रहता है। (शनि व गुरु परस्पर सम होने से मित्रवत् व्यवहार करते हैं। गुरु, काल पुरुष का भाग्येश होकर सुख भाव में है, तो शनि दशमेश होकर सप्तमस्थ है। यहाँ गुरु अधिक बली है वह शनि की अशुभता पूरी तरह नष्ट कर देता है। यों भी कहावत है कि जाता हुआ शनि बहुत कुछ देकर जाता है, निश्चय ही देवोपासना सत्कर्म व दान पुण्य से जातक के पाप नष्ट होते हैं व गुरु की कृपा से धन वैभव सुख शान्ति तथा समृद्धि की वृद्धि होती है।

विशेष: न तो शनि पापी है और न ही अशुभ, वह तो अपने पिता सरीखा किंचित निर्मम क्रूर उपकारी ग्रह है। जीव प्रायः लोभ, मोह व सुख लिप्सा के फेर में पड़कर अनजाने ही पापकर्म कर बैठता है। अनेक दुष्कर्म तो ऐसे भायावह होते हैं कि जीव को सैंकड़ों वर्ष तक दुःसह नरक यातना भोगनी पड़े। शनि, आत्मा पर पड़े कलुषता के आवरण को हटाने व सुख सामग्री की निस्सारता बतलाने के लिये आता है। ये धन वैभव को नष्ट कर जातक के मन में, ज्ञान व वैराग्य की ज्योति जलाता है। इसे छलकपट, राग द्वेष से मानो घृणा हैं ये तो सत्य समता तथा न्याय का पक्षधर है, अतः इसकी दशा में वृद्ध, असहाय व दीनजन की सेवा सहायता से दुख मिटता है व खुशी मिलती है।

अध्याय-9

बुध दशा का नैसर्गिक फल

बुध अधिकतर जिस ग्रह के साथ स्थित होता है उसके फल देता है। बुध विद्यार्थियों का प्रतिनिधि ग्रह है। शायद इन बातों को ध्यान में रखकर ही बुध को नपुंसक ग्रह माना है। क्योंकि विद्यार्थी ब्रह्मचर्य का पालन करता है। यदि बुध बलवान, शुभ दृष्ट व उच्च का हो तो धन की प्राप्ति, सुख, सम्मान प्राप्त होता है। परोपकार, धन, भूमि, वस्त्रादि का सुख मिलता है। लेखन व प्रकाशन का कार्य करता है। यदि बुध निर्बल, पीड़ित व नीच हो तो परस्त्रीगामी, स्वजनों से विरोध, पदच्युति माता व भ्रातृ पक्ष की हानि, विदेश यात्रा, मस्तिष्क के रोग होते हैं। जातक विद्याहीन होता है। व्यवसाय में हानि होती है। यदि बुध सूर्य के साथ हो तथा अस्त नहीं तो बुधादित्य योग बनता है। जातक विद्वान व खगोलशास्त्री होता है। यदि बुध अस्त हो जाए तो जातक मानसिक दुःख, अपने परिवार जनों से वैमनस्य, वाचाल निन्दा करने वाला होता है। यदि बुध शुभ ग्रह युक्त हो तो शुभ कर्म, कीर्ति सम्मान, स्त्री सुख, धन की प्राप्ति होती है। पाप युक्त बुध की दशा में पाप कर्म, पर–निन्दा, व्यर्थ में ज्यादा बोलना, भूमि, स्त्री, पुत्र सुख की हानि होती है। बन्धुजनों से वियोग, अपने पद संच्युति, विदेश यात्रा एवं छोटी नौकरी उस पर भी कलह होता है।

विभिन्न भावगत बुध दशा का फल

केन्द्रगतः अधिकारियों से मित्रता, धन–धान्य, स्त्री, पुत्रादि का सुख, धार्मिक कर्म, उत्तम भोजन एवं वस्त्राभूषण की प्राप्ति होती है।

लग्न भावः अधिकार, यश, सम्मान प्राप्त होता है। धार्मिक कार्य, गंगा स्नान होता है।

द्वितीय भावः विद्या की प्राप्ति कीर्ति वृद्धि, अधिकारियों से मित्रता, मधुर वाणी प्राप्त होती है।

तृतीय भावः आलस्य, उदर रोग, वमन, मन्दाग्नि, भाई–बहिनों से वैमनस्य होता है।

चतुर्थ भावः मकान, सन्तति–सुख, रोजगार व नौकरी में हानि, स्थान परिवर्तन, मातृपक्ष को कष्ट होता है।

पंचम भावः नीच वृति, बौद्धिक क्रूरता एवं धन प्राप्ति में कठिनाई होती है।

षष्ठ भाव: वात, पित एवं कफ जनित नाना प्रकार के रोग, राज्य, अग्नि, चोर से भय होता है।

सप्तम भाव: विद्या, स्त्री, पुत्र और उत्तम वस्त्र की प्राप्ति होती है। राज्य सम्मान व अधिकारियों से मित्रता होती है।

अष्टम भाव: वात–पित्त–कफ जनित नाना प्रकार के रोग होते हैं। राज्य, अग्नि, चोर से भय होता है।

नवम भाव: स्त्री, पुत्र एवं धन की प्राप्ति होती है।

दशम भाव: अधिकार, सम्मान यश प्राप्त होता है। पुस्तक का प्रकाशन, शुभ कर्म, पुत्र एवं स्त्री से सुख प्राप्त होता है।

एकादश भाव: किसी से धन की प्राप्ति होती है।

द्वादश भाव: शरीर के किसी अंग का भंग, पुत्र एवं स्त्री से मत भेद, आकस्मिक घटना से मृत्यु का भय होता है।

बुध/बुध

जातक धर्म मार्ग पर चले, विद्वानों व ब्राह्मणों के संग से निर्मल बुद्धि प्राप्त कर सभी बाधाओं को दूर कर, धन–यश व सुख पाए।

बुध/केतु

दुःख शोक व क्लेश से मन अधीर व व्याकुल हो। शत्रुओं से भय व हानि हो। रेवती व वाहन की क्षति हो।

बुध/शुक्र

देवता, ब्राह्मण व गुरु के प्रतिश्रद्धा हो। जातक दान व धर्म में लगे। मित्र समागम तथा वस्त्राभूषण प्राप्त कर सुखी हो। (बुध व शुक्र परस्पर मित्र हैं। बुध से बुद्धि व व्यवहार कुशलता तथा शुक्र द्वारा जातक राजसी भोग पाता है।)

बुध/सूर्य

राजसम्मान, उत्तम भोजन व पेय, भव्य भवन–वाहन व उत्कृष्ट धन संपदा मिले। (बुध के लिये सूर्य मित्र ग्रह है जो सूर्य की सिंह राशि से द्वितीय भाव कन्या में स्थित होकर धन व खान–पान का सुख देता है। यों भी सूर्य राजा है व बुध राजकुमार; अतः राजा सूर्य का लाड़ प्यार बुध को सहज प्राप्त है।

बुध/चंद्रमा

सिर में दर्द, (कंठ) गले में दर्द एवं नेत्र में कष्ट/विकार हो। जातक को चर्मरोग, दाद, खाज, खुजली व सफेद दाग की बीमारी हो। कभी प्राणों को संकट या भय हो। (चंद्रमा देह की सुंदरता व स्वास्थ्य है, मन की सुख शांति भी है। बुध के लिए चंद्रमा शत्रु ही है। अतः बुध स्वास्थ्य संबंधी चिन्ता परेशानी देगा।

बुध/मंगल

आग या चोरी से धन हानि। नेत्र पीड़ा, मन में दुःख व चिन्ता। पदच्युति व मकान छूटे। वात रोग से कष्ट हो। (मंगल, चन्द्रमा को मित्र व बुध को शत्रु मानता है। बुध धन व प्रसन्नता का प्रतीक है। अतः मंगल अपनी अन्तर्दशा में बुद्धि को भ्रमित कर चिन्तातुर बनाता है। किसी भी तरह से धन हानि करता है। बदले में बुध भी भूमि भवन व अधिकार पद की दिया करता है।

बुध/राहु

उदर, मस्तक व नेत्र में पीड़ा, स्वास्थ्य की हानि हो। अग्नि, विष व जल से भय हो। जातक के धन, मान व पद (प्रतिष्ठा/अधिकार) की क्षति हो। (बुध भले ही पापी न हो किन्तु राहु तो प्रबल पापी व अशुभ माना गया है। अतः धन, मान प्रतिष्ठा व स्वास्थ्य की हानि करने में पीछे नहीं हटता।)

बुध/गुरु

शत्रु व रोग से छुटकारा, धार्मिक कार्यों में सफलता व राजसम्मान मिले। धर्म व तपस्या में विशेष रुचि हो। (गुरु वेदनिष्ठ, शास्त्रमर्मज्ञ ब्राह्मण है; तो बुध है– बुद्धि चातुर्य व व्यवहार कुशलता का प्रतीक। अतः ज्ञान व बुद्धि के मिलन से शुभ कार्य संपन्न होंगे। जिनके कारण मान, सम्मान, यश कीर्ति का विस्तार होगा व मन में हर्ष उल्लास, उत्साह, उमंग, आस्था, विश्वास जनित सुख उपजेगा।)

अध्याय-10

केतु दशा का नैसर्गिक फल

केतु एक छाया ग्रह है। हमेशा राहु से सप्तम भाव में रहता है। केतु का फल राहु फल के अनुसार होते हैं।

विभिन्न भाव में केतु–दशा का फल

लग्न भावः कृश, दुर्बला, उदास, भ्रमित, लोभी कंजूस, बन्धुओं से विरोध, अशुद्धचित्त का होता है।

द्वितीय भावः राजा से कष्ट, दुःखी एवं शत्रु जैसा बोलता है, बुद्धि भ्रम, स्त्री सुख से रहित होता है।

तृतीय भावः शत्रु नाश, पराक्रमी, छोटे भाई–बहिन को कष्ट, कन्धे व कान में रोग, साझेदारी से लाभ होता है। यात्रा, बहुत खर्च, हृदय रोग एवं बहरापन होता है।

चतुर्थ भावः माता रोगी रहती है। सौतेली माता से कष्ट, वाहन सुख एवं स्वभाव अस्थिर रहता है।

पंचम भावः कपटी, दुर्बल, धैर्यहीन होता है। पुत्रकम कन्याएं ज्यादा, पेट के रोग, तंत्र–मंत्र से भाईयों का घात करता है।

षष्ठ भावः शत्रु नाश, मामा से वैर, स्त्री सुख कम चौपायों से लाभ, अपने को सर्वज्ञ समझता है।

सप्तम भावः स्त्री रहित, व्यभिचारी, अस्थिर, प्रवासी निवास स्थान बारबार बदलने वाला, व्यसनी, राजा से भय होता है।

अष्टम भावः पापकृत्य तत्काल प्रकट होता है। पर स्त्री में आसक्त, नेत्ररोगी, दुराचारी, एवं दीर्घायु होता है।

नवम भावः धर्म विरोधी, दुराचारी, झूठ बोलने वाला, क्रोधी, वक्ता, दूसरों की निन्दा करने वाला भाईयों से झगड़ने वाला, शूर, बलवान एवं अभिमानी होता है।

दशम भावः बुद्धिमान, शास्त्रज्ञ, प्रवासी एवं विजयी होता है।

एकादश भावः मीठा बोलता है, विनोदी, विद्वान, ऐश्वर्य सम्पन्न, तेजस्वी, वस्त्रों आभूषणों से युक्त, लाभ प्राप्त करता है।

द्वादश भावः यात्राएं, चंचल, उदार, खर्चीला,. ऋण ग्रस्त रहता है। बुध युक्त हो तो व्यापार में सफल प्राप्त होता है।

केतु/केतु

मित्रों से विरोध, शत्रुओं से कलह, देह ताप, अशुभ वचन से मनःसंताप, दूसरे के घर में रहना पड़े एवं धन की हानि हो।

केतु/शुक्र

पत्नी, ब्राह्मण व कुटुंबी जन से वैर एवं विरोध जनित क्लेश हो। कन्या जन्मे। मान हानि, अपमान हो। लोगों से कष्ट पहुँचे।

केतु/सूर्य

गुरुजन का मरण, निज जन से विरोध व ज्वर से कष्ट हो। सरकार की ओर से कलह उपस्थित हो। वात कफ जनित रोग किन्तु विदेश जाने से लाभ मिले।

केतु/चन्द्र

अनायास धन का लाभ व हानि भी हो। पुत्र से वियोग जन्य कष्ट हो। घर में शिशु का जन्म हो। नौकर व कन्या संतान का लाभ हो। कभी संतान के कारण दुःख उठाना पड़े।

केतु/मंगल

घर के वृद्धजन से कलह, बंधुओं से वियोग अथवा अनिष्ठ, सर्प, चोर, अग्नि–शत्रु से भय एवं पीड़ा हो।

केतु/राहु

शत्रु निर्मित कलह से कष्ट हो। राजा, अग्नि व चोर से भय हो। जातक दूसरों को हानि पहुँचाने का प्रयत्न करे। उसकी निन्दा, भर्त्सना एवं गालियाँ खाए।

केतु/गुरु

श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति, देवोपासना, धन–भूमि लाभ, आय वृद्धि, उपाहार व भेंट मिले, राज सम्मान व सुख मिले।

केतु/शनि

नौकरों की/से हानि, दूसरों से कष्ट, शत्रुओं से विवाद–झगड़ा, स्थान हानि, धन हानि, अंग भंग की संभावना बढ़े। नौकरी छूटना व स्थानान्तरण भी हो सकता है।

केतु/बुध

उत्तम पुत्र की प्राप्ति, उच्चाधिकारी/नियोक्ता से प्रशंसा मिले। भूमि व धन का लाभ हो। प्रबल वैरी द्वारा कष्ट, कृषि व पशु धन की क्षति हो।

विशेषः कालपुरुष के जन्मांग में केतु भाग्य भवन में गुरु की राशि में स्थित है ऐसी कल्पना की गई है। उपरोक्त फलादेश उस दृष्टि से ठीक नहीं प्रतीत होता वल्कि वृश्चिक राशि में अष्टमस्थ केतु निश्चय ही ऐसे पाप फल देगा। विज्ञजन की मान्यता है कि भाग्य, धर्म व सत्कर्म की नींव पर बनता है। अतः केतु के शुभ फल पाने के लिये असत्य–अधर्म का मार्ग त्याग कर धर्म, दया, सेवा, सहायता व परोपकार का मार्ग अपनाना ही श्रेयस्कर होगा। केतु धर्म का नाशक है, उसने जन्मते ही राहु सरीखे प्रबल दैत्य के सिर को धड़ से अलग करा दिया। प्रत्यक्षे किम् प्रमाणम्।

अध्याय-11

शुक्र दशा का नैसर्गिक फल

यदि शुक्र बलवान, शुभ युक्त या दृष्ट तथा शुभ भाव में स्थित हो तो जीवन सफल होता है। व्यवसाय में यश, सम्पत्ति, कीर्ति आदि की प्राप्ति होती है। स्त्रियां एकाधिक होती है। कामुक किन्तु परस्त्रियों से विमुख प्रवृति की होती है।

स्त्री, सन्तान, धन, सम्पत्ति, आभूषण और वाहन द्वार–सुख प्राप्त होता है। राज्य पक्ष से सम्मान होता है, विद्या–लाभ, गायन और नृत्यादि में मन लगाने वाला, शुभ स्वभाव दानादि अभिरुचि रखने वाला एवं क्रय–विक्रय में चतुर होता है।

यदि शुक्र निर्बल या पीड़ित हो तो झगड़ालू, खर्चीली प्रवृति के प्रेम सम्बन्धों की चाह होती है। साधारण भाषा में दिल फैंक कहते हैं। इज्जत की फिक्र न करने वाले, अनैतिक सम्बन्धों में रस लेने वाले, चंचल अविश्वासी होते हैं। सभी कमाई शराब पीने में गवां देते हैं। मित्रता में भी स्थिरता नहीं होती। किसी भी चीज में व्यवस्थिता नहीं होती। धर्म कर्म के बारे में भी उदासीन रहते हैं। घरेलू झगड़े वात–कफ प्रकोप जनित रोग होते हैं।

विभिन्न भावगत शुक्र दशा के फल

केन्द्र भावः उत्तम वस्त्र, सुगन्धित द्रव्य, नवरत्न, आभूषण, वाहन आदि से शारीरिक सुख की प्राप्ति होती है।

लग्न भावः राजनेताओं से मित्रता व लाभ, वाहन आभूषण आदि से शारीरिक सुख की प्राप्ति होती है।

द्वितीय भावः धनी, उत्तम भोजन, मधुर वाणी, परोपकारी, राज–सम्मान प्राप्त होता है।

तृतीय भावः उत्साही, साहसी, उत्तम वाहन, आभूषण वस्त्रादि एवं भाईयों से सुख प्राप्त होता है।

चतुर्थ भावः अधिकार प्राप्ति, वस्त्र, आभूषण, वाहन सुगन्धित द्रव्य आदि प्राप्त होते हैं। सम्मान व कीर्ति प्राप्त होती है। माता का सुख मिलता है।

पंचम भावः सन्तान प्राप्ति, कीर्ति, सम्मान व उत्तम विद्या प्राप्ति होती है।

षष्ठ भावः धन नाश, पुत्र, कुटुम्ब एवं भाईयों, स्त्री की हानि, शत्रु भय, रोग का आक्रमण होता है।

सप्तम भावः स्त्री का वियोग, परदेश गमन, रोग, प्रमेह, व्यभिचारी, सन्तान एवं बन्धुजन की हानि होती है।

अष्टम भावः शस्त्र, अग्नि या चोर से आघात, कभी सुख कभी दुःख की प्राप्ति होती है। धन की वृद्धि और राजकीय यश प्राप्त होता है।

नवम भावः राज सम्मान, पिता व गुरुजनों से सुख और यश की वृद्धि, धार्मिक कर्मों में रुचि होती है।

दशम भावः धार्मिक कर्मों में रुचि, नवीन सम्पत्ति, वाहन आदि की प्राप्ति, वस्त्र, आभूषण, सुगन्धित द्रव्य आदि की प्राप्ति होती है।

एकादश भावः राज सम्मान, पुत्र, धन, वस्त्र सुगन्धित द्रव्यों की प्राप्ति होती है। व्यवसाय में वृद्धि, परोपकारी एवं पुस्तक लिखने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

द्वादश भावः राज–सम्मान, धन की प्राप्ति, स्थानच्युति। विदेश भ्रमण, मातृ वियोग एवं मन दुःखी होता है।

शुक्र की महादशा में उत्तम वाहन, धन–संपदा–रत्न–आभूषण की प्राप्ति, क्रीड़ा, मनोरंजन, सुख वैभव सामग्री, स्त्री सुख, नल, यात्रा व राजसम्मान की प्राप्ति हो तथा घर में मंगल कार्य हों। शुक्र शुभ ग्रह है काल पुरुष का धनेश व सप्तमेश होने से निश्चय ही धन, देह कान्ति, उत्तम खान–पान, वस्त्राभूषण व स्त्री सुख देगा। द्वादशस्थ होने पर समुद्र पार से धनागम कराएगा, किन्तु व्ययभाव में स्थित ग्रह हानि, चिन्ता व कष्ट भी देता है। अतः किसी गुरुजन का वियोग, बन्धुओं को कष्ट व मन में चिंता भी होगी।

शुक्र/शुक्र

वस्त्राभूषण, वाहन, सुगन्धित पदार्थ, स्त्री भोग, धन संपदा व सुख प्राप्त हो। देह कान्ति बढ़े।

शुक्र/सूर्य

नेत्र, कपोल, कुक्षि (बगल) में रोग/पीड़ा हो। राजभय, गुरुजन अथवा बन्धु से/को पीड़ा हो(सूर्य व शुक्र परस्पर शत्रु हैं, सूर्य राजा है तो शुक्र सुख है। अतः राजा या गुरुजन (वरिष्ठ) अधिकारियों से भय एवं कष्ट की संभावना बढ़ती है। कालपुरुष के जन्मांग में शुक्र, सूर्य से द्वादश भाव में है। ये भी सुख की हानि करने वाली स्थिति है।)

शुक्र/चंद्र

नख–शिख व दांतों में चोट लगे, दर्द हो। वात–पित्त रोग, धन नाश, संग्रहणी, यक्ष्मा अथवा गुल्म रोग हो। (सूर्य की भांति चंद्रमा भी शुक्र के लिये शत्रु ही है। चंद्रमा कालपुरुष का सुखेश है तो शुक्र द्वितीयेश, अतः रोग–पीड़ा, धन हानि से मनस्ताप होना सहज है।

शुक्र/मंगल

पित्त प्रकोप व रक्त दोष से पीड़ा हो। भूमि, सोना तांबा सरीखी धातु की प्राप्ति व लाभ होता है। किसी युवती से अवैध संबंध होना संभव है। कार्य व्यवधान/परिवर्तन हो। नौकरी या व्यापार बदले। मंगल कालपुरुष का लग्नेश होकर दशमस्थ है तो शुक्र धनेश होकर व्यय भाव में। इनमें परस्पर संबंध 3–11 भाव का है जो अशुभ ही कहा जाएगा। मंगल भूमि लाभ तो अवश्य कराएगा, किन्तु रक्त विकार या उच्च रक्त चाप भी दे सकता है। इसी प्रकार शुक्र–मंगल के कारण काम वेग को बढ़ाएगा, अविवेकी बनाकर पशुवत् आचरण दे सकता है।

शुक्र/राहु

पुत्र का जन्म, धन लाभ व आदर सत्कार मिले। वाणी मधुर व प्यारी हो। शत्रु पर विजय मिले, शत्रु कारावास भोगे। कभी जातक को भी विष, अग्नि, चोर से पीड़ा व मानसिक संताप होता है।

शुक्र/गुरु

उच्च पद व अधिकारों की प्राप्ति हो। धर्म कर्म में संलग्न हो देवताओं का पूजन करे। स्त्री पुत्र का सुख पाए। राज्य कृपा से विविध सुखभोग प्राप्त हों।

शुक्र/शनि

समाज, सेना या सरकार से सम्मान मिले। उत्तम स्त्री सुख, धनागम व सुख साधन की प्राप्ति

व वृद्धि हो। (शुक्र व शनि परस्पर मित्र हैं। काल पुरुष के जन्मांग में शुक्र भोग स्थान में है, तो शनि भी सप्तम भाव में शुक्र की राशि का होकर स्थित है। अतः ये शनि, निश्चय ही भोग सामग्री, वैभव व भाग्य वृद्धि के साथ सुख बढ़ाएगा।)

शुक्र/बुध

धन–संपत्ति, यश–प्रतिष्ठा, पद–अधिकार व पुत्र का सुख मिले। शत्रुओं का नाश हो। जातक वात–पित्त–कफ (त्रिदोष) व्याधि से पीड़ित हो। (बुध पराक्रमेश होकर षष्ठस्थ होने से पराक्रम वृद्धि कर शत्रु नाश करेगा। शुक्र धनेश होकर भोग भवन में उच्चस्थ होने पर वैभव व सुख सामग्री बढ़ाकर सुख देगा।)

शुक्र/केतु

संपत्ति व सुख की हानि, अग्नि भय, देह में पीड़ा, पुत्र वियोग व वेश्याओं की संगति हो। (शुक्र दैत्य गुरु है, वह भोगी भी है। केतु प्रबल देवशत्रु है। अतः भोग लिप्सा व धर्म विमुखता के दुखदायी परिणाम इस अवधि में प्राप्त होना स्वाभाविक ही है। केतु मानो चेतावनी देता है कि वह धर्म का पक्षधर है। अधर्म, अन्याय व स्वार्थ के लिये जातक को कठोर दंड अवश्य मिलेगा।)

अध्याय-12

भावाधिपति ग्रह दशा विचार

जन्मांग में विचारणीय भाव की राशि का स्वामी भावेश कहलाता है। पिछले अध्याय में बताया कि कोई ग्रह जिस भाव में स्थित है उस भाव का फल देगा। तदुपरांत वह जिस राशि में है उस राशि के गुणानुसार फल देगा, अन्त में जिन ग्रहों की दृष्टि है अथवा जिन ग्रहों द्वारा दशानाथ दृष्टि है (देखा जाता है) उनके प्रभाव के अनुसार दशा फल देगा। इस अध्याय में कहा गया है कि दशानाथ जिस भाव का स्वामी या कारक है उसके फल अपनी दशा/भुक्ति में किस प्रकार देगा।

लग्नेश की दशाः प्रायः जातक का स्वास्थ्य व सुख–दुःख दर्शाती है। लग्नेश की दशा में लग्न के शत्रु (षष्ठेश या शत्रु ग्रह) की भुक्ति में शरीर को कष्ट व मृत्यु होना संभव है। लग्न का संबंध आयुष्य व शरीर से होता है, अतः स्वास्थ्य प्रभावित होना स्वाभाविक बात है।

धनभावः द्वितीय भाव का संबंध धन, कुटुंब, प्रारंभिक विद्या (मतान्तर से विद्या कितनी, कैसी व कब तक भी धन भाव से जानें), द्वितीय भाव नेत्र व वाणी का कारक भी है। धनेश अपनी दशा/भुक्ति में धन, कुटुंब सुख व विद्या दिया करता है। धनेश का सूर्य से संबंध होने पर जातक परोपकारी, धनी एवं विद्वान होता है। धनेश का गुरु से संबंध ज्ञान विवेक व अध्यात्म की ओर झुकाव देता है किन्तु धनेश का शनि से संबंध विद्या प्राप्ति में बाधा देता है, स्वल्प/हीन विद्या देता है।

यदि सूर्य/चंद्र निर्बल, नीच, शत्रु युक्त/क्षेत्री होकर मंगल तथा केतु से दृष्ट हो तो जातक नेत्रहीन अथवा विषम दृष्टि दोष (अंधत्व) से पीड़ित होता है। प्रायः धनेश की दशा/भुक्ति में घटना होती है। अंधत्व योग के लिये चंद्र षष्ठम, सूर्य अष्टम, शनि द्वादश तथा मंगल द्वितीय भाव में हो तो सूर्य चंद्र नेत्र ज्योति के कारक होकर दुःस्थान (त्रिकभाव) में बैठने से दुर्बल हो जाते हैं। मंगल पाप ग्रह द्वितीयस्थ हो व शनि तथा सूर्य द्वारा दृष्ट भी हो तो जातक की नेत्र ज्योति बचना कठिन हो जाता है, उसकी दृष्टिहीनता की प्रबल संभावना होती है।

तृतीय भावः भाई बहन साहस, पराक्रम, परिश्रम का प्रतीक है। ये भाव जातक का स्नेह, सहयोग, सहभागिता, सांझापन दर्शाता है। यदि जन्मांग में द्वादशेश तृतीय भाव में हो तो वह तीसरे भाव की हानि करेगा। जातक भाई बहन के सुख से वंचित रहेगा, उसे द्वेष मतभेद रखेगा, स्वार्थी होकर मात्र अपने शरीर पोषण में लगा रहेगा। तृतीयेश मनुष्य के अहंता को भी दर्शाता है। कदाचित इसी कारण यदि तृतीयेश का अष्टम भाव तथा अष्टमेश से संबंध हो तो जातक आत्मघात कर बैठता है। तृतीयेश की दशा में अष्टमेश की भुक्ति आत्महत्या करा सकती है।

चतुर्थ भाव से प्रायः भूमि, भवन, माता व मन के सुख संतोष का विचार किया जाता है। परिवार की सुख शान्ति व मित्रों का विचार भी अनेक विद्वान ज्योतिषी चतुर्थ भाव से करते हैं। इसे सुख भाव भी कहा जाता है। प्राचीन विद्वानों ने दशम भाव को राजा व चतुर्थ को प्रजा का प्रतीक माना है। चतुर्थेश में चंद्रमा की भुक्ति जनप्रिय बनाकर राजनीति में सफलता देती है। यदि चतुर्थ भाव पीड़ित हो या चतुर्थेश पापग्रह हो तो ऐसा चतुर्थेश अपनी दशा/भुक्ति में राज द्रोह या जनता द्वारा जातक का नकारा जाना दर्शाता है। यों चंद्रमा भी जनता/प्रजा का कारक माना जाता है।

पंचम भाव से संतान, धारणा शक्ति, बुद्धि बल, हर्ष–प्रसन्नता प्रेमी/प्रेमिका (प्रगाढ़ मैत्री) संबंधी विचार किया जाता है। कुछ मनीषी नवम भाव को पिता भाव मान पंचम भाव से पिता का भाग्य (सफलता/उन्नति) जानने का प्रयास करते हैं तो अन्य मनीषी शत्रु व रोग नाश का विचार (षष्ठम से द्वादश होने के कारण) पंचम भाव से करते हैं। इसी पंचम भाव से सट्टा, लॉटरी द्वारा धन प्राप्ति का भी ज्ञान होता है। पंचम भाव में राहु/केतु की स्थिति हो तथा पंचमेश बली, शुभग्रह युक्त/दृष्ट हो तो पंचमेश की दशा/भुक्ति में अनायास अनार्जित धन (रेस, लाटरी, शर्त सट्टा से) प्राप्त होता है। श्री मसीन का मत है कि योग कारक कोई भी ग्रह राहु/केतु से संबंध करने पर अपनी दशा/भुक्ति में धन दिया करता है।

षष्ठ भाव से रोग ऋण, शत्रु व संघर्ष का विचार किया जाता है। षष्ठेश अपनी दशा अन्तर्दशा में प्रायः रोग व शत्रु भय दिया करता है। यदि दशानाथ से षष्ठमस्थ ग्रह की अन्तर्दशा (भुक्ति) हो अथवा दशानाथ के नैसर्गिक शत्रु की भुक्ति हो तो भी अनिष्ट व पाप फल मिला करता है।

यदि भुक्ति नाथ (अन्तर्दशा वाला ग्रह) दशानाथ के साथ ही लग्नेश का भी शत्रु तथा दशानाथ से षष्ठ/अष्टम भाव में हो तो अधिक हानि व कष्ट मिलता हे। संक्षेप में दशानाथ का शत्रु या दशानाथ से षष्ठ स्थान में स्थित ग्रह अथवा लग्न से षष्ठ भाव का स्वामी ग्रह (षष्ठेश) अपनी भुक्ति में रोग, शत्रु भय, व पदच्युति दिया करता है। परम स्नेही व इष्टजन भी शत्रु बन जाते हैं।

सप्तम भाव से प्रायः विवाह व व्यापारिक सांझेदारी या विदेश यात्रा या सम्बन्ध का विचार किया जाता है। पति/पत्नी का रंग रुप, चरित्र स्वभाव, सामाजिक प्रभाव, विवाह कब, ससुराल कैसी, दांपत्य सुख का विचार सप्तम भाव से ही होता है। सप्तम भाव में शनि की राशि, स्थिति/दृष्टि विवाह में विलंब करती है तो बुध की राशि (मिथुन व कन्या) शीघ्र विवाह में सहायक होती है। सप्तमेश की दशा/भुक्ति, सप्तम भाव के कारक शुक्र की दशा या भुक्ति में विवाह योग होता है। कुछ मनीषी शुक्र के साथ गुरु की दशा/भुक्ति गोचर गुरु की सप्तम/सप्तमेश से युति/दृष्टि होने पर विवाह की बात कहते हैं।

अष्टम भाव को जीवन की पूर्णता आयुष्य, मृत्यु, अपमान व मृतक धन का प्रतीक मानते हैं। अष्टमेश की दशा मृत्यु देने में समर्थ होती है। कुछ विद्वानों के अनुसार लग्न, सूर्य अथवा चंद्रमा से अष्टम भाव का स्वामी अपनी दशा/भुक्ति में मृत्यु दे सकती हैं। देव केरल कार के विचार से तीन लग्नों में अष्टमेश की दशा/भुक्ति के साथ ही यदि गोचर का शनि अष्टमेश के नवांश के स्वामी की राशि में स्थिति/दृष्टि जातक को मृत्यु दे सकती है। यदि अष्टमेश पापी होकर लग्नस्थ हो तथा लग्न शुभ ग्रह की युति/दृष्टि से वंचित हो तो अष्टमेश की दशा/भुक्ति में देह कष्ट व देह की हानि करता है। इसके विपरीत अष्टमेश बली, शुभ ग्रह युक्त/दृष्ट हो तो जातक दीर्घायु होता है। लग्नेश अष्टमेश यदि दोनों ही ग्रह बली हों तो जातक स्वस्थ व दीर्घायु होता है।

नवम भाव को भाग्य भवन कहा जाता है। प्राच्यग्रंथों में इस भाव को धर्म भाव मात्र कहा गया है यों भी भाग्य पुण्य कर्म का फल ही तो है। भाग्य का प्रयोग नियति अथवा दैवी कृपा के रुप में होता है। यथा ठेले वाला, ट्रक चालक, टैक्सी ड्राइवर, कुली कबाड़ी सरीखे व्यवसाय को नियति से जोड़ दिया जाता है। अतः व्यवसाय व जीविका का विचार भाग्य भवन से किया जाता है। इसी के साथ दैवी अनुग्रह किस्मत, तकदीर, भाग्य, आशा व योग्यता से अधिक फल की प्राप्ति भी नवम भाव से जानी जाती है। नवमेश की दशा/भुक्ति में प्रायः भाग्योदय, पदोन्नति, धन मान, सुख समृद्धि की प्राप्ति होती है। यदि नवमेश पापी

हो या दशानाथ से भुक्तिनाथ पाप ग्रह नवमस्थ हो तो दुर्भाग्य, दैन्य, द्:ख व अपमान मिलता है। जातक को मिथ्या कलंक व अपयश का भागी होना पड़ता है। नवम भाव से पुत्र का पुत्र या पौत्र तथा संतान के बुद्धि बल का भी विचार किया जाता है।

दशम भाव की प्राचीन विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा गायी है। संत तुलसीदास की बड़ी स्पष्ट घोषणा है ''कर्म प्रधान विश्व करि रखा,, जो जस करहिं, सो तस फल चाखा''अर्थात उस परमात्मा ने ये संसार कर्म प्रधान (कर्म पर आधारित) बनाया है, जो जैसा करता है उस को वैसा ही फल मिलता है। ज्योतिषीय जन्मकुंडली से अधिक ये तथ्य भला कौन जान सका है। इसमें नवम स्थान धर्म, दशम कर्म तो उसके तुरंत बाद एकादश स्थान लाभ का होता है। जन्मांग की मानो स्पष्ट घोषणा है कि धर्म पर आधारित जन कल्याण व परोपकार के कार्य करने से ही सच्चे लाभ की प्राप्ति होती है। वही जन्म जन्मान्तर से संसार में भटकते जीव की सच्ची कमाई है। अस्तु।

प्राचीन मनीषियों के विचार से सूर्य, मंगल, शनि, राहु केतु सरीखे पाप ग्रह भी बली होकर (शुभ दृष्ट/युत; स्वक्षेत्री/मित्र क्षेत्री) दशमस्थ होने से जनकल्याण के कार्य (यज्ञकर्म) कराते हैं। जातक जनता का संरक्षक व पालन कर्ता होता है। दशमेश शुभ ग्रह हो, शुभ दृष्ट/युत हो तो निश्चय ही अपनी दशा अन्तर्दशा में उन्नति, मान सम्मान, प्रतिष्ठा व वैभव देगा।

लाभ स्थान: लग्न से एकादश भाव, लाभ स्थान या आय भवन के नाम से प्रसिद्ध है। लाभ स्थान को त्रिषडाय (तीन, छः व ग्यारह) भाव मान कर दोष पूर्ण तथा निंदित भाव भी कहा गया है। अनुभव में यही आया है कि लाभेश की दशा/भुक्ति धन संबंधी शुभ फल देती है, विविध स्रोत से धन लाभ होता है, किन्तु देह कष्ट व मानसिक पीड़ा भी शायद कुछ बढ़ जाती है। मन में चिंता, क्लेश, परिवार में तनाव अशान्ति होने के कारण ही कदाचित इसे अनिष्ठ/पाप दशा माना गया है।

एकादश भाव: शरीर के लिये प्रायः कष्ट दायी होता है व एकादशेश की दशा/भुक्ति भले ही धन का लाभ दे, किंतु देह व स्वास्थ्य की हानि करती है। यदि लाभेश की दशा में दशानाथ व लग्नेश के शत्रु की भुक्ति (अन्तर्दशा) हो तब महान् विपत्ति व संकट की स्थिति बन जाती है। एकादश भाव माता के लिये मृत्यु स्थान है (ये चतुर्थ भाव से अष्टम भाव जो है) अतः लाभेश की दशा/भुक्ति माता के लिये कष्टप्रद या मृत्यु देने वाली हो सकती है।

लाभेश की दशा व भुक्ति काल में यदि गोचर का शनि एकादश भाव में युति/दृष्टि करे तो माता की मृत्यु होना संभव है।

द्वादश भाव से व्यय, हानि, विनाश का विचार किया जाता है। ये त्रिक भाव का अंग होने से अशुभ माना गया है, किंतु अन्य मनीषियों ने इसे भोग वैभव व ऐश्वर्य का प्रतीक बताया है। महर्षि पाराशर के विचार से द्वितीय व द्वादश भाव के स्वामी सम होते हैं तथा अपनी अन्य राशि के शुभत्व बल (शुभ ग्रह की दृष्टि/युति) के अनुसार दशा फल देते हैं। व्ययेश जिस भाव में हो, जिस ग्रह से युक्त/दृष्ट हो प्रायः उसका फल भी अपनी दशा/भुक्ति में दे दिया करता है।

द्वादश भाव के स्वामी की दशा में शुभ/योगकारक ग्रह की भुक्ति में सुख, भोग वैभव, समृद्धि बढ़ेगी ये बात निसंकोच कही जा सकती है।

शुभ ग्रह की गोचर में द्वादश भाव पर युति/दृष्टि निश्चय ही जातक को उदार बनाकर दान, धर्म व परोपकार पर धन व्यय कराती है।

भाव गत ग्रह की दशा/भुक्ति

लग्न में स्थित ग्रह की दशा में मनुष्य को देह सुख, स्वास्थ्य, आरोग्य लाभ होता है। मन में उत्साह, उमंग व सुख संतोष की प्राप्ति होती है। धन व वैभव मिलता है।

धन भावस्थ ग्रह की दशा में उत्तम भोजन की प्राप्ति हो। स्त्री, पुत्र व परिवार का सुख मिले। विद्या, वाणी की कुशलता तथा धन की वृद्धि होती है। घर में मंगल कार्य होते हैं।

तृतीय भावस्थ ग्रह में भाई का सुख, साहस, पराक्रम व मन बुद्धि में धीरज बढ़ता है। धन, वस्त्र, स्वर्णाभूषण की प्राप्ति व सुख/सफलता मिलती है।

चतुर्थ भावस्थ ग्रह की दशा में भूमि, भवन, संपदा व वाहन सुख की प्राप्ति होती है। धन, आरोग्य, खाने पहनने का सुख, भाईबंधु व मित्रों से सुख मिलता है।

पंचमस्थ ग्रह की दशा में स्त्री, पुत्र एवं मित्रों का सुख व सहयोग मिले। विद्या, बुद्धि, यश – प्रतिष्ठा की वृद्धि, स्वास्थ्य व पराक्रम जनित सुख मिलता है।

षष्ठमस्थ ग्रह की दशा में राजा, चोर, अग्नि, विष या शस्त्र से भय होता है। रोग बढ़ने की संभावना होती है। रोग, ऋण, शत्रु एवं मुकदमा से चिन्ता, परेशानी होती है।

सप्तमस्थ ग्रह की दशा में स्त्री–पुत्र का लाभ, परिवार सुख, धन, वाहन व संपत्ति की वृद्धि राज सम्मान व यश की प्राप्ति होती है। विवाह का योग बनता है।

अष्टमस्थ ग्रह की दशा में कार्यालय, आवास या पदवी का नाश, महान दुख, बंधु–बाधवों को कष्ट, धननाश, दरिद्रता, अन्न में अरुचि, द्वेष भाव में वृद्धि व शत्रु से भय, अपयश, कलंक व अपमान भुगतना पड़े।

नवमस्थ ग्रह की दशा में पुत्र, स्त्री, धन, धान्य, भूमि, संपदा की वृद्धि व सुख मिले।

दशमस्थ ग्रह की दशा में पदोन्नति, मान प्रतिष्ठा, स्त्री पुत्र का सुख, सत्कार्य–सत्संग, सुख एवं वैभव की प्राप्ति होती है।

लाभस्थ ग्रह की दशा में स्त्री पुत्र का लाभ बंधु बांधवों का सुख, राजसम्मान, धन वस्त्र व सुख साधन की प्राप्ति होती है। संतजन की कृपा मिलती है।

व्यय भावस्थ ग्रह की दशा में अकर्मण्यता, आलस्य, शरीर में रोग, पीड़ा, दुःख, दरिद्रता, हानि, अपव्यय एवं असफलता जनित क्लेश होता है।

6–8–12 वें भाव में स्थित ग्रह की दशा प्रायः अनिष्ट फल दिया करती है।

अध्याय-13

ग्रह फल के नियम

हमने ग्रहों का स्वभाववश साधारण नैसर्गिक फल का अध्ययन किया। इसको देखने के साधारण नियम निम्न प्रकार से है।

1. जो ग्रह स्वगृही, स्वनवांश, मित्रगृही, उच्च राशिगत, स्वद्रेष्काण आदि अच्छी स्थिति में हो केंद्र व त्रिकोण में स्थिति हो, उसका राशीश (जिस भाव में ग्रह स्थित है, उस भाव का स्वामी) तथा नवांश स्वामी (नवम राशि स्वामी) भी षडबल से युक्त हो तो दशान्तर्दशा में शुभ फल प्राप्त होता है।

2. जो ग्रह नीच या शत्रु गृही, शत्रु नवांश, शत्रु द्रेष्काण आदि अशुभ स्थिति में हो या 6, 8, 12 भाव में स्थित हो या अशुभ युक्त या दृष्ट हो तो दशान्तर्दशा का अशुभ फल मिलता है।

3. दशा स्वामी शुभ व बलवान हो तो उसके मित्र ग्रह की अन्तर्दशा में शुभफल प्राप्त होता है।

4. नीच या निर्बल ग्रह की महादशा में नीच या निर्बल ग्रह की अन्तर्दशा में अशुभ फल मिलता है।

5. यदि नैसर्गिक अशुभ ग्रह शत्रु राशि में स्थित हो तो बहुत अशुभ फल देता है।

6. यदि नैसर्गिक शुभ ग्रह शत्रु राशि में स्थित हो तो कम शुभ फल देता है।

7. अपने अष्टक वर्ग में जिस भाव में ग्रह स्थित हो यदि उस भाव में कोई शुभ रेखा न हो तो भाव का फल नष्ट हो जाता है।

8.(क) यदि दशानाथ से अन्तर्दशा नाथ 6, 8, 12 भाव में स्थित हो तो अशुभ फल प्राप्त होता है।

(ख) यदि ग्रह केंद्र या त्रिकोण व 2, 3, 11 भाव में स्थित हो तो शुभ फल प्राप्त होता है।

(ग) सप्तम स्थान स्थित ग्रह अशुभ फल देता है।

9. दशानाथ व अन्तर्दशा नाथ ग्रहों की आपस में नैसर्गिक मैत्री का भी ध्यान रखना चाहिये जैसे सूर्य की महादशा में शनि या शनि की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा अशुभ फलकारक होती है, क्योंकि दोनों में नैसर्गिक शत्रुता है।

10. दशानाथ से अन्तर्दशानाथ का क्रम क्या है उसके अनुसार भी दशाफल मिलता है। 3, 5, 7 क्रम की दशा अशुभ फल देता है। जैसे बृहस्पति की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा अशुभ फल देता है, क्योंकि बृहस्पति से शुक्र का क्रम 5 वां है। राहु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा अशुभ फल प्रद है, क्योंकि राहु की दशा से शनि की दशा का क्रम तीसरा है।

11. सूर्य, शनि, राहु व इनके अधिष्ठित राशियों के स्वामी (राशीश), नक्षत्र एवं नवांश के स्वामी (नवांशेश) इनका प्रभाव लिए होते हैं।

    सूर्य, शनि, राहु व द्वादशेश जिस भाव व ग्रह पर प्रभाव डालते हैं। उसको उसके कारकत्व से पृथक कर देते हैं।

12. किसी भी राशि, भाव या ग्रह पर उससे दशम भाव स्थित ग्रह का सदा प्रभाव रहता है।

13. कुण्डली में प्रथम, पंचम एवं नवम भाव अग्नि तत्व का प्रतिनिधित्व करता है। द्वितीय, षष्ठम तथा एकादश भाव पृथ्वी तत्व का, तृतीय, षष्ठ एवं दशम भाव वायु तत्व का चतुर्थ, अष्टम एवं द्वादश भाव जल का प्रतिनिधित्व करते हैं।

    जो ग्रह जिस भाव में स्थित होता है, उस भाव के तत्व का भी फल देता है। जैसे सूर्य अग्नि तत्व का ग्रह है, परन्तु यदि सूर्य चतुर्थ, अष्टम या द्वादश भाव में स्थित हो तो व जल तत्व का भी फल देगा।

14. जब कोई ग्रह किसी राशि में स्थित है तो उस राशि का स्वामी, राशि में स्थित ग्रह का भी फल देगा। जैसे सूर्य तुला राशि में स्थित है तो शुक्र अपनी दशान्तर्दशा में सूर्य के पृथकता वादी फल भी देगा।

15. यदि कोई भावेश शुभ भाव का स्वामी है, परन्तु अशुभ भाव में स्थित या अशुभ ग्रह से युति या दृष्टि सम्बन्ध है तो शुभ फल देने में असमर्थ होता है। इसका यह अर्थ नहीं की वह अशुभ फल देता है।

16. अशुभ भाव के स्वामी यदि बलवान हो तो अपने भाव के पदार्थ के लिये (मटीरियलधातु) शुभ होते हैं, परन्तु जीव के लिये अशुभ होते हैं।

यदि निर्बल हो तो धातु की हानि करते हैं, परन्तु जीव सुखी रहता है।

प्रत्येक भाव के दो पक्ष होते हैं 1. जीव एवं 2. धातु। जब पापी ग्रह बलवान होता है तो धातु (धन, वाहन, भूमि, वस्त्रादि) देता है। परन्तु जीव दुःखी होता है। जीव को धन के लिये यात्राएं, रोग, दुर्घटनाएं आदि देता है। मानसिक कष्ट प्राप्त करता है। यदि पाप भावेश निर्बल हो तो पदार्थ प्राप्त नहीं होते। परन्तु जीव को मानसिक सन्तोष रहता है।

लग्न कुण्डली
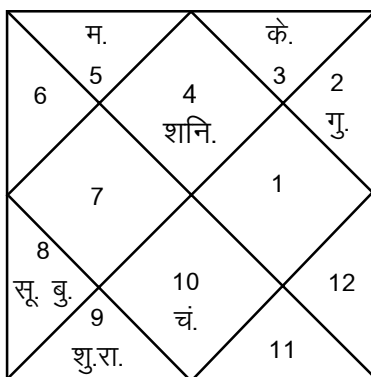
भूतपूर्व भारत की प्रधान मन्त्री श्रीमति इन्द्रिरा गांधी की कुण्डली है।

दिसम्बर 1976 में शनि की महादशा में शुक्र की भुक्ति आरम्भ हुई। शनि सप्तमेश व अष्टमेश है तथा शत्रु राशि में लग्न में स्थित है। शनि लग्न का शत्रु ग्रह है। शुक्र षष्ठ भाव में स्थित है। चतुर्थ व एकादश भाव का स्वामी है। चतुर्थेश चंद्र का शत्रु ग्रह है। राहु के साथ स्थित है, जब शनि/शुक्र की भुक्ति शुरु हुई निर्वाचन हार गई, सहयोगियों ने साथ छोड़ा, जेल गई। शनि व शुक्र एक दूसरे से 6/8 है। जनवरी 1980 में सूर्य की भुक्ति आरम्भ हुई। सूर्य लग्नेश का मित्र है व त्रिकोण में स्थित है, पुनः प्रधान मन्त्री बनी। परन्तु द्वादशेश पंचम में स्थित है। सूर्य के साथ है तो सूर्य ने पुत्र से वियोग भी दिया।

17. भुक्तिनाथ यदि दशानाथ या लग्नेश का शत्रु ग्रह है तथा अशुभ भाव में स्थित है अशुभ युक्त या दृष्ट हैं तो अशुभ फल देता है।

इसलिए मंगल में बुध की भुक्ति एवं सूर्य में शनि की भुक्ति अशुभ फल देती है।

18. दशानाथ व भुक्ति नाथ उस घटना को ही घटित करते हैं जो दोनों में साझी होती है।

    श्रीमति इन्द्रिारा गांधी की कुण्डली में शनि अष्टमेश व सप्तमेश है। अष्टमेश होकर राज्य की समाप्त का प्रतिनिधित्व करता है। शुक्र दशम भाव से द्वितीयेश होने के कारण राज्य प्राप्ति का प्रतिनिधित्व करता है। राज्य दोनों में सांझा हुआ। इसलिये शनि/शुक्र में राज्य की हानि हुई।

19. शनि व 6, 8, 12 भाव के स्वामी निर्बल है या अस्त है व लग्नेश बलवान है तो लग्नेश की दशा में एवं 6, 8, 12 व शनि की भुक्ति में अशुभ फल नहीं मिलता है।

20. यदि दशानाथ नैसर्गिक शुभ ग्रह है (शुक्र, गुरु) और मारक भाव का स्वामी भी है तो अष्टमेश की भुक्ति में मरण की सम्भावना रहती है।

21. अष्टमेश यदि मारक भी है तो अपनी भुक्ति में मरण नहीं देता।

22. राहु/केतु का अपना फल नहीं होता। वे फल देते हैं (क) जिस ग्रह से युति या दृष्टि सम्बन्ध होता है। (ख) यदि किसी ग्रह से सम्बन्ध नहीं हो तो जिस भाव में स्थित होते हैं उसके स्वामी का फल देते हैं। (ग) जिस नवांश में होते हैं उसके स्वामी के अनुसार फल देते हैं। (च) नक्षत्र के अनुसार फल देगा।

23. शुभ ग्रह जितना बली होगा। उतना शुभ फल देगा। नैसर्गिक अशुभ ग्रह यदि निर्बल होगा तो जीव को हानि करने में असमर्थ होगा। (परन्तु धन भी नहीं दे पाएगा)

24. यदि अशुभ ग्रह नीच हो व निर्बल भी हो तो अपनी दशान्तर्दशा में अशुभ फल देगा।

25. यदि कोई ग्रह भाव सन्धि में स्थित हो तो वह ग्रह फल देने में असमर्थ होता है।

26. अशुभ ग्रह की महादशा में यदि तृतीय पंचम, सप्तम, अष्टम या लग्न के स्वामी की भुक्ति हो तो जातक को राज्य, चोर, अग्नि, दुर्घटना व शत्रु आदि से भय रहता है।

अध्याय-14

विंशोत्तरी दशा

विंशोत्तरी दशा पद्धति नक्षत्र पर आधारित पद्धति है। यह सारे भारत वर्ष में प्रयोग में लाई जाती है। यह सर्व मान्य दशा पद्धति है।

यह भाव के स्वामित्व पर आधारित है। ग्रह जिस भाव का स्वामी है, फल भी उसी के अनुसार प्राप्त होगा। इसलिये भाव के कारकत्व को समझना तथा भाव के स्वामी के गुण को समझना आवश्यक है। अभी तक हम ग्रहों के नैसर्गिक गुणों व कारकत्व के आधार पर ग्रहों की दशान्तर्दशा के फल का अध्ययन किया है। अब हम भाव के अधिपति होने के आधार पर दशान्तर्दशा का फलित करेंगे।

ग्रह अपनी दशान्तर्दशा में छः प्रकार का फल देता है।

भावों के कारकत्व के आधार पर फलित

महर्षि/विद्वानों ने कुण्डली को बारह/द्वादश भागों में बांटा है भावों में राशि कोई भी हो परन्तु भाव का कारकत्व स्थिर रहता है। भाव में कोई भी ग्रह स्थित हो वह भाव में कारकत्व को बढ़ाता है। परन्तु भाव के कारकत्व में किसी भी प्रकार से अन्तर नहीं आता, जैसे प्रथम भाव को तनु भाव कहते हैं। तनु भाव से शरीर के स्वास्थ्य का बोध होता है। इसमें चाहे कोई भी राशि हो या ग्रह स्थिति हो तनु भाव का स्वामी का स्वामी शरीर के स्वस्थ या अस्वस्थ होने को दर्शाएगा इत्यादि। इसलिये भाव का विशेष महत्व है।

1. संक्षिप्त में भावों के कारकत्व

प्रथम भाव/लग्न/तनु भाव : इस भाव से शरीर सम्बन्धी विचार किया जाता है। रूप, रंग, दुर्बलता, पुष्टता, शारीरिक गठन, आकृति, तिल, मसा, शरीर का लम्बा, मध्यम या छोटा कद, आचार, स्वभाव, यश, बल आदि का विचार होता है।

द्वितीय भाव/धन भाव : से धन, धान्य, समृद्धि सुवर्ण रत्न, बैंक में धन आदि का विचार, क्रय, विक्रय, अर्जित द्रव्य का विचार, परिवार (भाई बहिनों) का सुख, भोग, सत्य–असत्य, खाने के पदार्थ, पात्र व वस्त्र का विचार, मुख, जिह्वा, बोलने की शक्ति, वाणी, चेहरा, नेत्र साधारण शिक्षा, मृत्यु का विचार द्वितीय भाव से किया जाता है।

तृतीय भाव/सहज भाव : छोटे सगे भाई बहिन का विचार होता है। भाई–बहिनों की संख्या उनका दुःख, सुख, दास–दासी, चाचा–ताऊ और उनकी पत्नी, माता–पिता का भरण, आस पास के पड़ोसी व सम्बन्धी, पराक्रम, साहस, शारीरिक बल, सहन शक्ति, क्रीड़ा, युद्ध, कुश्ती, आयु, आजीविका, व्यापार, उद्यम, यात्रा, आने जाने के साधन, पत्र, प्रेस, टेलीफोन, सूचना के साधन, यातायात के साधन, अखबार, प्रकाशन आदि कंठ, स्वर, वीर्य, गला, कान (दादा कान), हाथ, बाहु, कंधा, श्वास नली, दमा इत्यादि का विचार तृतीय भाव से किया जाता है।

चतुर्थ भाव/सुहृद भाव/सुख भाव : इष्ट मित्र, बन्धु वर्ग, माता से प्राप्त दुःख–सुख, माता का स्वभाव व आयु, मातृ पक्ष का विचार, वक्ष स्थल, श्वसुर, नानी, घरेलू स्त्री, सुख, दासिया, पिता की सम्पत्ति, आयुष्य के अन्त में सुख–दुःख का विचार, स्थावर सम्पत्ति, वाहन, तालाब, खेती बाड़ी, औषध, भूमि का कारोबार, रसायन शास्त्र, भू–विद्या, हृदय का साहस, शिक्षा, मानसिक बातें, स्वतः का दुखः सुख, राज्य–अनुग्रह, हस्त–कौशल, वस्त्र, सुगन्ध।

पंचम भाव/पुत्र भाव : संतान का विचार, (पहली सन्तान) का विचार, गर्भ, विद्या, बुद्धि, यांत्रिकज्ञान, स्मरण शक्ति, बुद्धि की तीक्ष्णता, विनय, प्रबंध, सलाह, मन्त्रणा, वाणी, देव भक्ति, मंत्र सिद्धि, पूर्व कर्म, राज्य अनुग्रह, लॉटरी सट्टे आदि में लाभालाभ, अन्न दान, मनोरंजन के स्थान, वाटिका, यह उदर स्थान है। हृदय व उदर के बीच का स्थान है। इसका प्रभाव पीठ पर भी पड़ता है। सृजनात्मक कार्य।

षष्ठ भाव/रिपु भाव/रोग भाव/ शत्रु भाव : शत्रु, होने वाली व्याधि, रोग, अरिष्ट, हानि, धन नाश, निराशा, दुःख, शोक, लड़ाई झगड़ा, क्रूर कर्म, व्यसन, ऋण, विस्फोट, युद्ध का भय, चोर भय, मामा, मौसी का शुभाशुभ, सौतेली मां पर आश्रय, गाय, भैंस, ऊंट, नौकर, अपने नीचे काम करने वालों का विचार, कर्ज, रुकावट, नाभि, आंते, पेट आदि का विचार षष्ठ भाव से किया जाता है।

सप्तम भाव/जाया भाव : स्त्री, स्त्री का पति, विवाह, स्त्री सुख, मैथुन, काम क्रीड़ा, श्रृंगार, व्यभिचार, स्त्री सौभाग्य, स्त्री कलह, पुत्र सुख, विशेष तौर पर पहले पुत्र के दुःख सुख का विचार, भाई का पुत्र, यात्रा, मुकदमा, संग्राम का मैदान, अदालती झगड़े, साझेदारी, प्रगट स्पर्धा, प्रकट शत्रु, मार्ग गमन–आगमन, यात्रा का परिणाम, व्यापार, पद प्राप्ति, विदेश व्यापार, नष्ट धन की प्राप्ति, गुमा धन की प्राप्ति, गुदा, गुह्य, मूत्रेन्द्रिय, मूत्र, नाभी, इसमें सभी ग्रह अशुभ माने जाते हैं।

अष्टम भाव/मृत्यु भाव : आयु, मरण, व्याधि रोग, क्लेश, मानसिक पीड़ा, मरने का स्थान, मरने का कारण, मृत्यु के सम्बन्ध में सब प्रकार का विचार, आकस्मिक लाभ, दहेज, इन्शोरेंस से प्राप्त धन, लॉटरी से प्राप्त धन, शत्रु का भय, छिद्र का देखना, आविष्कार, अपमान, पद हानि, अचानक घटना गुप्त अंग, गुदा रोग, लिंग के रोग।

नवम भाव/धर्म भाव/भाग्य भाव : भाग्य की वृद्धि, प्रारब्ध, वैभव, ऐश्वर्य, धर्माधर्म श्रद्धा, धर्मानुष्ठान, मठ, मंदिर, तालाब, कुंआ, शिक्षक, गुरु भक्ति, दीक्षा, स्वभाव, नीति, नम्रता, स्नेह, ईश्वरीय ज्ञान, मन की शान्ति, सुपात्र, विद्वानों का आदर, पिता लम्बी व दूर की यात्रा, विदेश यात्रा शरीर का बायां भाग, टांगें, जंघा आदि।

दशम भाव/कर्म भाव : उद्यम, आजीविका, धंधा, नौकरी आदि का विचार, राज्य, राजा से आदर, पदवी, अधिकार, महत्व के पद की प्राप्ति, नौकरों पर अधिकार, प्रभुत्व, राज्य, प्रधान, पुरुषार्थ, कीर्ति, मान–सम्मान, दास, दास अच्छे बुरे कर्म, काम में रुचि, यज्ञ, गंगा स्नान, यात्रा आदि शुभ कर्म, बलिदान, प्रब्रज्या, संन्यास, मन की शक्ति, स्नायु शक्ति, विद्या जनित यश, परीक्षोत्तीर्ण, पितृ पक्ष के सुख का विचार, पिता व पितृ धन का विचार, विदेश यात्रा, घुर्टना, आकाश वर्षा एवं पीठ का विचार किया जाता है।

एकादश भाव/लाभ भाव : सब वस्तुओं के मिलने का विचार, धन प्राप्ति, इच्छित वस्तु की प्राप्ति, वाहन की प्राप्ति, मकान आदि जायदाद की प्राप्ति, कान, बांया कान, भोजन बनाने की विद्या, राज्य सुख, मित्र सुख, मित्र का प्रकार, शुभाशुभ, सफलता, कन्या संतान, पुत्र नाश, ज्येष्ठ भाई या बहिन, बांया हाथ, इसका प्रभाव, पिंडली व टखने पर होता है।

द्वादश भाव/व्यय भाव : इसमें सब प्रकार के व्यय सम्बन्धी कार्यों का विचार होता है। धन व्यय, दुर्व्यय, जलाशय, कुएं, वाबड़ी, तालाब, यज्ञ आदि में व्यय, उत्तम या नीच कर्म, शुभ या अशुभ कर्मों पर व्यय, अंग हीनता, कुरूपता, गरीबी, अधिकार की हानि, रोगों पर व्यय, अस्पताल में भर्ती व व्यय, कैद, शरीर नाश, वाहन नाश, निद्रा, निद्रा का न आना, गुप्त शत्रु संस्था, लड़ाई झगड़े पर व्यय, हठ जिद, दंड, कैद, कारागार, दान सम्बन्धी व्यय, त्याग, शैयागृह, शयन सुख, आध्यात्म विद्या, गुप्त विद्या, मोक्ष, विदेश गमन, नेत्र आदि रोग (विशेष बायां), बायां पांव, पांव की उगलियां आदि का विचार द्वादश भाव से किया जाता है।

इस प्रकार भावों के कारकत्व के अनुसार ग्रह भावाधिपति होने के कारण अपनी दशान्तर्दशा में शुभाशुभ फल देते हैं।

2. **अनुगुणज** : जो फल हमें भाव में स्थिति के कारण या अन्य ग्रहों के साहचर्य के कारण या दृष्टि के कारण मिलता है वह ग्रह का अनुगुणज फल कहलाता है।

3. **योगज फल** : ग्रह का जो फल परस्पर सम्बन्ध के कारण मिलता है उसे योगज फल कहते हैं। ज्योतिष में चार प्रकार के सम्बन्ध ग्रहों पर स्पर्श भर होते हैं।

(क) **स्थान सम्बन्ध** : ग्रहों का परस्पर एक दूसरे की राशि में बैठना स्थान सम्बन्ध कहलाता है।

(ख) **दृष्टि सम्बन्ध** : ग्रहों का आपस में एक दूसरे को देखना दृष्टि संबंध कहलाता है।

(ग) **अन्यतर स्थान दृष्टि संबंध** : यदि एक ग्रह दूसरे ग्रह की राशि में स्थित हो व दूसरा ग्रह पहले ग्रह को देखे तो यह सम्बन्ध अन्यतर स्थान दृष्टि सम्बन्ध कहलाता है।

(घ) **युति सम्बन्ध** : ग्रहों का एक साथ किसी स्थान में बैठना युति सम्बन्ध कहलाता है।

नं0 1
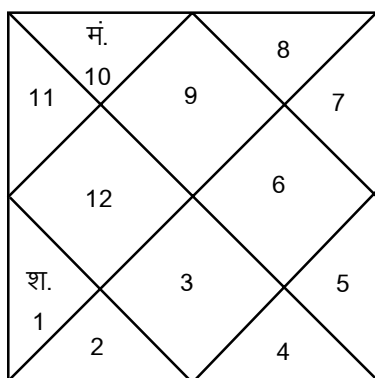
नं0 2
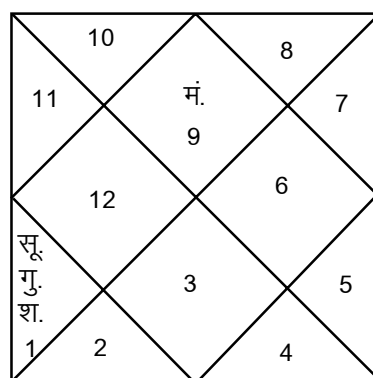
कुण्डली नं0 1

मंगल शनि के राशि में स्थित है व शनि मंगल की राशि में स्थित है। यह स्थान सम्बन्ध कहलाएगा।

मंगल शनि को चतुर्थ दृष्टि से देख रहा है व शनि मंगल को दशम दृष्टि से देख रहा है यह दृष्टि सम्बन्ध कहलाएगा।

कुण्डली नं0 2 में मंगल बृहस्पति की राशि में स्थित है व बृहस्पति मंगल को नवम दृष्टि से देख रहा है यह अन्यतर स्थान दृष्टि सम्बन्ध कहलाएगा।

सूर्य, शनि व बृहस्पति एक ही भाव में स्थित होने के कारण यह युति सम्बन्ध कहलाएगा। सबसे बलवान सम्बन्ध स्थान सम्बन्ध है अन्य सम्बन्ध उत्तरोत्तर कमजोर सम्बन्ध है।

परस्पर सम्बन्धित केंद्रेश एवम् त्रिकोणेशों के फल को भी योगज–फल कहते हैं।

4. सहायज फलः परस्पर केन्द्र, त्रिकोण, त्रिषडाय,त्रिएकादश, षडाष्ट या द्विद्वादश में स्थित ग्रहों का फल सहायज फल कहलाता है।

5. दृष्टिज फलः एक ग्रह को जब दूसरा ग्रह देखता है उस फल को दृष्टि फल कहते हैं।

6. मितजः एक ही भाव में स्थित ग्रहों का फल युति फल/मितज फल कहलाता है।

इस प्रकार प्रत्येक ग्रह अपनी महादशा में उक्त 6 प्रकार के फल देता हैं परन्तु हम विंशोत्तरी दशा का ही अध्ययन करते हैं इसलिये केवल भावाधिपति होने के कारण उत्पन्न फल को ही कुछ विस्तार से अध्ययन करेंगे।

अध्याय-15

विंशोत्तरी दशा फल

विंशोत्तरी दशा को समझने के लिये महर्षि पाराशर के नियमों को समझना आवश्यक है। महर्षि पाराशर ने कुण्डली के भावाधिपतियों को निम्न प्रकार से विभाजित किया है।

1. त्रिकोण के स्वामी सभी ग्रह—नैसर्गिक शुभ या अशुभ ग्रह—शुभ फल देते हैं। जातक ग्रन्थों में गुरु, शुक्र, शुक्ल पक्षीय चंद्रमा एवम् शुभ ग्रह युक्त बुध को नैसर्गिक शुभ ग्रह माना है तथा शनि, मंगल, राहु, केतु, 5 तिथि कृष्ण पक्ष से लेकर अमावस्या तक चंद्रमा एवम् पाप युक्त बुध ग्रह को अशुभ ग्रह माना है। होरा शास्त्र के आचार्यों का मत है कि स्वभावतः नैसर्गिक शुभ ग्रह अपनी दशा एवम् भुक्ति में शुभ फल व अशुभ ग्रह अशुभ फल देते हैं। परन्तु त्रिकोण के स्वामी—शुभाशुभ—सभी ग्रह शुभ फल देते हैं। त्रिकोण में 1, 5, 9 भाव ग्रहण करेंगे।

2. त्रिषडाय के स्वामी अशुभ फल देते हैं। तृतीय, षष्ठ एवम् एकादश भाव के स्वामी चाहे नैसर्गिक शुभ ग्रह हो या अशुभ ग्रह, सभी अशुभ फल देते हैं।

3. (क) यदि नैसर्गिक शुभ ग्रह केन्द्रों के स्वामी हो जाएं तो शुभ फल नहीं देते हैं।

(ख) यदि नैसर्गिक अशुभ ग्रह केन्द्रों के स्वामी हो जाएं तो अशुभ फल नहीं देते।

होरा शास्त्र के ग्रन्थकर्ता के अनुसार जब केन्द्र का स्वामी नैसर्गिक शुभ ग्रह होता है तो वह अपना स्वाभाविक शुभ फल नहीं देता और इसी प्रकार नैसर्गिक अशुभ फल नहीं देता परन्तु इसका अर्थ यह कभी नहीं कि शुभ ग्रह केन्द्र के स्वामी होकर अशुभ फल देते हैं। अपितु शुभ फल नहीं देते अर्थात् सम हो जाते हैं। इसी प्रकार अशुभ ग्रह केन्द्र के स्वामी होकर अशुभ फल नहीं देते। इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि वे शुभ फल देते हैं अपितु केवल अशुभ फल नहीं देते अर्थात् दूसरे शब्दों में सम हो जाते हैं। सम ग्रह अपनी दशा व भुक्ति में कैसा फल देता है यह आगे देखेंगे।

4. लग्न से द्वादश एवम् द्वितीय भाव के स्वामी सम फलदायक होते हैं

सम–फल दायक का क्या अर्थ है? अर्थात् द्वितीय एवम् द्वादश भाव के स्वामी, दूसरों के साहचर्य के अनुसार तथा अपनी दूसरी राशि के भाव के अनुसार फल देते हैं। ग्रह की किसी भाव में स्थित होना या अन्य ग्रहों के साथ बैठना साहचर्य कहलाता है। इस प्रकार द्वितीयेश एवं द्वादशेश जैसे भाव में बैठे हो–शुभाशुभ–वैसा शुभ या अशुभ फल देते हैं। जैसे त्रिकोण में बैठा हो तो शुभ फल और यदि त्रिषडाय में बैठा हो तो अशुभ फल देते हैं। इसी प्रकार द्वितीयेश एवं द्वादशेश यदि शुभ ग्रह के साथ बैठे हों तो शुभ फल और यदि अशुभ ग्रह के साथ बैठे हों तो अशुभ फल देते हैं।

प्रत्येक ग्रह की दो–दो राशियां होती हैं, केवल सूर्य व चंद्रमा की एक–एक राशि है। इसलिये सम ग्रह का फल देखने की दूसरी विधि है उसकी दूसरी राशि को भी ध्यान में रखना। यदि ग्रह की दूसरी राशि अशुभ भाव में है–त्रिडाय में है तो अशुभ फल देगा और यदि त्रिकोण में है तो शुभ फल देगा।

इस प्रकार हम सम भावाधिपति के शुभाशुभत्व का निर्णय करते हैं। यही नियम केन्द्र के स्वामियों के सम होने पर भी प्रयोग में आता है। परन्तु केन्द्र के स्वामियों में एक समस्या और भी है विशेष तौर पर बुध व गुरु की राशियों का लग्न में होना। इन लग्नों में बुध या गुरु दो–दो केन्द्रों के स्वामी हो जाते हैं। ऐसे में निर्णय कैसे लें?

लग्न–केन्द्र व त्रिकोण होने के कारण शुभ है। सप्तम भाव मारक भाव होने के कारण अशुभ है। इसलिये जो ग्रह लग्न का स्वामी होगा वह शुभ फल देगा व जो ग्रह सप्तम भाव का स्वामी होगा वह अशुभ फल देगा।

इसी प्रकार कर्क व सिंह लग्न की कुण्डलियों में गुरु त्रिकोण व षष्ठ भाव या अष्टम भाव का स्वामी होता है। गुरु कैसा फल देगा? गुरु त्रिकोण का एवम् षष्ठ का या अष्टम भाव का स्वामी होने के कारण सम हो गया इसलिये भाव में स्थित व साहचर्य के अनुसार फल देगा या नैसर्गिक शुभ ग्रह होने के कारण व त्रिकोण का स्वामी होने के कारण शुभ फल देगा।

इसी प्रकार शनि बुध की राशियों में, मिथुन व कन्या लग्न की राशियों में–त्रिकोण व षष्ठ या अष्टम भाव का स्वामी हो जाता है। ऐसे में शनि कैसा फल देगा? ऐसी परिस्थिति में

शनि त्रिकोण का स्वामी होने के कारण शुभ व षष्ठ भाव या अष्टम भाव का स्वामी होने के कारण अशुभ हो जाता है अर्थात् सम हो जाता है। सम ग्रह साहचर्य व भाव स्थिति के अनुसार फल देता है। यदि षष्ठ या अष्टम भाव में अपनी ही राशि में स्थित हो तो ऐसी परिस्थिति में शनि नैसर्गिक अशुभ ग्रह होने के कारण अशुभ फल देगा।

यही परिस्थिति कर्क व सिंह लग्न में चंद्रमा या सूर्य के अपनी राशि स्थिति में होने पर होती है। यदि चंद्रमा या सूर्य द्वितीय या द्वादश भाव के स्वामी हों एवम उसी भाव में किसी अन्य ग्रह के बिना स्थित हो तो कैसा फल देगा? इस परिस्थिति में द्वितीय भाव में यदि चंद्रमा या सूर्य अपनी राशि में स्थित है तो शुभ फल मिलेगा, क्योंकि चंद्रमा एवम सूर्य अपनी राशि में स्थित है तो शुभ फल मिलेगा, क्योकि चंद्रमा एवम सूर्य को अष्टम भावाधिपति होने का दोष नहीं लगता तो द्वितीय भावाधिपति का दोष कैसे लगेगा। यदि आयुर्दाय खण्ड की समाप्ति के आसपास इन ग्रहों की दशा आई तो मारकेश होने के कारण मारकत्व का भी कार्य करेंगे। इसी प्रकार द्वादश भाव में अपनी ही राशि में स्थिति के कारण चंद्रमा एवम सूर्य अशुभ फल देंगे। द्वादश भाव व्यय भाव है। कई विद्वान इसे मारक भाव भी मानते हैं। चंद्रमा–मन एवम सूर्य–आत्मा है दोनों ही स्वयं में एक लग्न है। ऐसे में लग्न से व्यय भाव में स्थिति लग्न के लिये अशुभ होगी, ऐसा हमारा मत है।

5. लघुपाराशरीकार के अनुसार

''भाग्यव्ययाधिपत्येन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः'' अर्थात् अष्टमेश भाग्य भाव का व्ययाधीश होने के कारण शुभ फल नहीं देता।

यहां पर भी अष्टमेश का ''शुभ फल नहीं देता'' कहा गया है। यह नहीं कहा गया है कि अशुभ फल देता है। इसी प्रकार केन्द्र के स्वामियों के बारे में भी कहा गया है और हमने उन्हें सम माना है। तो अष्टमेश को भी सम मानना चाहिये। डा. बी. वी. रमन ने ऐसा ही माना है परन्तु अन्य होराशास्त्रियों ने इसे अशुभ माना है क्योंकि आगे चल कर स्वयं लघुपाराशरीकार ने अष्टमेश को राजयोग भंग कारक माना है। अनुभव में भी यही आया है कि अष्टमेश जहां बैठता है या जो भावाधिपति अष्टम भाव में स्थित होता है उस भाव का नाश होता है। इसलिये अष्टमेश को हम अशुभ ही मानकर दशान्तरदशा का फलित करेंगे।

6. यदि लग्नेश स्वयं ही अष्टमेश हो जाए तो उसको अष्टमेश होने का दोष नहीं लगता।

लग्नेश क्योंकि केन्द्र व त्रिकोण का स्वामी है, इसलिये शुभ फल देने वाला है। यदि लग्नेश ही अष्टम भाव का स्वामी हो जाए तो वह कैसा फल देगा? जैसे मेष लग्न में मंगल ही लग्नेश व अष्टमेश है। इसी प्रकार तुला लग्ने में शुक्र लग्नेश व अष्टमेश है। मंगल व शुक्र कैसा फल देंगे। होरा शास्त्रकारों ने ऐसे में लिखा है कि लग्नेश को अष्टमेश होने का दोष नहीं लगता व लग्नेश शुभ फल देता है।

इसी प्रकार वृश्चिक लग्न में व वृष लग्न में मंगल व शुक्र लग्न व षष्ठ भाव के स्वामी होते हैं। यदि अष्टमेश होने का दोष नहीं लगता तो राजयोग भंग कारक है तो षष्ठेश होने का दोष कैसे लगेगा। इसलिये शुभ फल दायक है।

परन्तु अनुभव में आया है कि ऐसी परिस्थिति में ग्रह सम हो जाता है एवम साहचर्य व भाव स्थिति के अनुसार फल मिलता है। क्योंकि यह परिस्थिति शुक्र व मंगल ही राशियों के लग्न में होने पर उत्पन्न होती है। मंगल नैसर्गिक अशुभ ग्रह है और शुक्र को सबसे ज्यादा केन्द्राधिपति दोष लगता है। इसलिये दोनों को सम लेकर चलने में ही उपयोगिता है।

7. लग्न केन्द्र व त्रिकोण दोनों होता है। इस दृष्टि से लग्नेश, केन्द्रेश एवम् त्रिकोणेश होता है। केन्द्र व त्रिकोण का स्वामी होने के कारण राजयोग कारक होता है।

इस प्रकार लग्नेश अपनी दशान्तर्दशा में विशेष रूप से शुभ फल–दायक होता है। इसलिये लग्नेश को षष्ठेश व अष्टमेश होने का भी दोष नहीं लगता। परन्तु लग्नेश का अष्टम भाव में बैठना, अष्टमेश का अष्टम भाव में बैठना या लग्नेश का अष्टमेश होकर अष्टम भाव में बैठना जातक ग्रन्थों के अनुसार अशुभ फलदायक ही माना गया है।

इसलिये लग्नेश का अष्टमेश होकर अष्टम भाव में बैठना अशुभ फल देता है। यदि अपनी राशि में स्थित शुभ फल नहीं देता तो अन्य भाव में शुभ फल कैसे देगा। इसलिये यदि पाठक ऐसे ग्रह को जो लग्नेश व अष्टमेश है सम मानकर चलें तो अच्छा होगा।

8. गुरु व शुक्र यदि द्वितीय या सप्तम भाव के स्वामी हैं तो अशुभ फल दायक हो जाते हैं।

गुरु व शुक्र नैसर्गिक शुभ ग्रह है। यदि ये शुभ ग्रह द्वितीय भाव या सप्तम भाव के स्वामी हो जाते हैं तो अशुभ फल देते हैं। बुध व चंद्रमा जो सशर्त शुभ ग्रह हैं। वे यदि इन भावों के स्वामी हो जाएगें तो और अधिक अशुभ होंगें। ये ग्रह अपनी दशान्तर्दशा में शुभ फल नहीं देते। यह दोष केवल शुभ ग्रहों में ही होता है, ऐसा जातक ग्रन्थकार कहते हैं। जो भाव शुभ ग्रहों को अशुभ बना देता है, यदि उसभाव के अशुभ ग्रह स्वामी हो जाए तो वे प्रबल अशुभ हो जाएंगे। उनकी दशान्तर्दशा प्रबल अशुभ मारक होती है, ऐसा मानकर चलना चाहिये। कुछ विद्वानों का यह मानना है कि पाप ग्रहों में यह दोष नहीं लगता। अनुभव में इसके विपरीत ही आया है। परन्तु अशुभ ग्रह यदि द्वितीय या सप्तम के स्वामी हो जाएं तो उनका मारकत्व प्रबल हो जाता है।

यदि द्वितीय व सप्तम भाव में अपनी ही राशि में ग्रह बैठ जाएं तो उस भवेश का मारकत्व प्रबल हो जाता है।

9. राहु एवं केतु को सम ग्रह लेकर चलना ही शुभ है।

राहु व केतु जिस–जिस भाव में स्थित हो या जिस भावेश के साथ युति हो उसके अनुसार अपनी दशान्तर्दशा में फल देते हैं अर्थात् त्रिकोण में बैठे हो तो शुभ फल, त्रिषडाय में स्थित हो तो अशुभ फल देते हैं। परन्तु यह फल तब प्राप्त होता है जब उनका किसी अन्य ग्रह से सम्बन्ध न हो। प्रत्युत जिस भावेश के साथ वह बैठा होगा उसके अनुसार भी फल देता है। ऐसी स्थिति में भाव एवं भावेश दोनों के शुभाशुभत्व पर विचार कर फलित करना चाहिये। यदि वह केन्द्र में त्रिकोणेश के साथ या त्रिकोण में केन्द्रेश के साथ स्थित है तो वे योगकारक ग्रह का फल देते हैं।

यदि राहु व केतु त्रिषडाय में किसी त्रिषडायाधीश के साथ बैठ है तो पाप फल, द्वितीय या सप्तम में किसी केन्द्रेश के साथ स्थित है तो सम फल देते हैं।

यदि राहु व केतु त्रिकोण में किसी त्रिषडायाधीश के साथ स्थित है या त्रिषडाय में किसी त्रिकोणेश के साथ स्थित है तो मिश्रित फल बलाबल के अनुसार देते हैं।

10. केन्द्रेश व त्रिकोणेश का सम्बन्ध यदि किसी अन्य भावेश के साथ न हो केवल परस्पर हो तो विशेष शुभ फल मिलता है।

प्रत्येक ग्रह की दो–दो राशियां होती हैं, सिवाय सूर्य व चंद्र के। इसलिये त्रिकोण या केन्द्र का स्वामी होने के साथ दूसरी राशि त्रिषडाय, विशेषतः तृतीय या षष्ठ भाव में भी हो सकती है तो केंद्रेश या त्रिकोणेश संदोष हो जाते हैं, यदि ऐसे कंद्रेश एवम् त्रिकोणेश का आप में सम्बन्ध हो व मित्र राशि, उच्च राशि व शुभ भाव में सम्बन्ध हो तो भी सम्बन्ध मात्र से शुभ फल मिलता है अर्थात् बलवान केंद्रेश व त्रिकोणेश के सम्बन्ध से, किसी अन्य भावेश के साथ सम्बन्ध न होने पर, भी शुभ फल प्राप्त होता है।

श्री शुक्रदेव चतुर्वेदी का मत है कि केवल सदोष दशमेश व नवमेश का ही सम्बन्ध होने पर शुभ फल प्राप्त होता है (अन्य केंद्रेश व त्रिकोणेश नहीं)।

(11.) महर्षि पाराशर ने ग्रहों को पांच भागों में विभक्त किया है।

1. मारक ग्रह : द्वितीय एवं सप्तम भाव के स्वामी हो।

2. पापी ग्रह : त्रिषडाय भाव के स्वामी एवं अष्टमेश हो।

3. शुभ ग्रह : त्रिकोण के स्वामी एवं लग्नेश हो।

4. सम ग्रह : केन्द्रेश व द्वितीया तथा द्वादशेश।

5. योग कारक ग्रह : यदि एक ही ग्रह केन्द्र तथा त्रिकोण का स्वामी हो जैसे कर्क तथा सिंह लग्न में मंगल, तुला व वृष लग्न में शनि, मकर व कुम्भ लग्न में शुक्र तो वह ग्रह योग कारक कहलाता है।

राजयोग कारक ग्रह की महादशा में **योग कारक से सम्बन्धित 1. मारक 2. पाप 3. शुभ की अन्तर्दशा कैसा फल देगी?**

राजयोग कारक ग्रह की दशा में सम्बन्धित मारक ग्रह की भुक्ति राजयोग का विस्तार करती है परन्तु बहुत कम। पापी ग्रह की भुक्ति मध्यम राजयोग देती है। परन्तु सम्बन्धित शुभ ग्रह की भुक्ति उत्तम राजयोग फल देती है।

12. योगकारक ग्रहों को दशान्तर्दशा तो शुभ फल देती है। परन्तु योगकारक ग्रहों की दशा में या अन्तर्दशा में उनसे सम्बन्ध न रखने वाले शुभ ग्रहों (कुण्डली के अनुसार शुभ ग्रह) की अन्तर प्रत्यन्तर दशा भी सामान्य शुभ फल देती है।

इसे योगकारक ग्रह का यदि अन्य त्रिकोणेश के साथ सम्बन्ध हो जाए तो शुभ फल प्राप्त होता है।

यदि ऐसे योगकारक ग्रह का किसी अन्य केंद्रेश के साथ सम्बन्ध हो जाए तो भी शुभ फल मिलता है।

शर्त एक ही है किसी अन्य भावेश के साथ सम्बन्ध नहीं होना चाहिये।

14. यदि योगकारक ग्रहों का सम्बन्ध अष्टमेश या लाभेश के साथ हो तो योगज फल नहीं मिलता।

हम पहले कह आए हैं कि सदोष केंद्रेश व त्रिकोणेश के सम्बन्ध से न्यूनाधिक योगज फल मिलता है। सदोष का अर्थ है कि यदि केंद्रेश या त्रिकोणेश की दूसरी राशि तृतीय या षष्ठ भाव में पड़े तो भी केंद्रेश व त्रिकोणेश के सम्बन्ध मात्र से शुभ फल प्राप्त होते हैं।

यहां यह कहा गया है कि यदि केंद्रेश या त्रिकोणेश की दूसरी राशि अष्टम या एकादश भाव में पड़े तो केंद्रेश व त्रिकोणेश के सम्बन्ध से शुभ फल प्राप्त नहीं होता।

15. प्रत्येक ग्रह अपनी महादशा में अपनी ही अन्तर्दशा में अपना भावानुरूप शुभ या अशुभ फल, कारक या मारक कोई भी फल नहीं देता।

16. प्रत्येक ग्रह अपना फल अपने से सम्बन्ध या अपने सधर्मी ग्रह की अन्तर्दशा में देते हैं।

सम्बन्ध से अर्थ है ज्योतिषीय चार प्रकार का सम्बन्ध जो हम पहले लिख आए हैं। सधर्मी का अर्थ है– समान–गुण–धर्म वाले ग्रह यथा केंद्रेश–केंद्रेश,त्रिकोणेश–त्रिकोणेश,त्रिषडायधीश या द्वितीयश–द्वादशेश आदि ग्रह सधर्मी ग्रह है। इसी प्रकार लग्नेश–सप्तमेश, चतुर्थेश–दशमेश, द्वितीयेश–द्वादशेश, तृतीयेश–एकादशेश, नवमेश–पंचमेश, षष्ठेश–अष्टमेश एक दूसरे के सधर्मी ग्रह हैं।

17. दशानाथ के विरुद्ध धर्मी, असम्बन्धित ग्रह की अन्तर्दशा में मिश्रित फल मिलते हैं। भली भांति विचार कर फलित करना चाहिये।

विरुध–धर्मी ग्रह का अर्थ है जो ग्रह एक ग्रह के गुण–धर्मों के विरुद्ध गुण धर्मों वाला ग्रह। यथा कारक एवं मारेक शुभ–अशुभ, शुभ –मारक, कारक–पाप ग्रह एक दूसरे के विरुद्ध–धर्मी ग्रह हैं।

18. यह सर्व विदित है कि केंद्रेश की महादशा में और सम्बन्ध होने पर त्रिकोणेश की भुक्ति अन्तर्दशा शुभ फल देती है। इसी प्रकार त्रिकोणेश की महादशा में सम्बन्ध होने पर केंद्रेश की अन्तर्दशा शुभ फल देती है। परन्तु यदि दोनों भावेशों में कोई सम्बन्ध न हो तो केंद्रेश की महादशा में व त्रिकोणेश की अन्तर्दशा में एवं त्रिकोणेश की महादशा में व केंद्रेश की अन्तर्दशा में शुभ फल नहीं मिलता है। सम्बन्ध न होने पर केंद्रेश या त्रिकोणेश की अन्तर्दशा भी शुभ फल नहीं देती।

19. योगकारक ग्रह की महादशा में सम्बन्धी या असम्बन्धी शुभ ग्रह की अन्तर्दशा शुभ फल देती है।

20. यदि राहु/केतु शुभ भाव (पंचम व नवम भाव) में स्थित हों व योगकारक ग्रह से सम्बन्ध रखते हों या नहीं, योगकारक ग्रह ही अन्तर्दशा में शुभ फल देते हैं।

कई विद्वानों के अनुसार यदि राहु/केतु केन्द्र में भी स्थित हो (विशेषतः चतुर्थ एवं दशम लग्न भाव में) (सप्तम भाव मारक होने के कारण प्रत्येक ग्रह सप्तम भाव में स्थित होने पर अशुभ फल देता है) तो योगकार ग्रह की अन्तर्दशा में शुभ फल देते हैं, चाहे सम्बन्धित हो या नहीं।

21. (क) यदि महादशा किसी पापी ग्रह की हो और अन्तर्दशा किसी असम्बन्धी शुभ ग्रह की हो तो पाप फल मिलता है।

(ख) अन्तर्दशा किसी सम्बन्धी शुभ ग्रह की हो तो मिश्रित फल मिलता है। मिश्रित = शुभाशुभ दोनों फल।

(ग) अन्तर्दशा किसी असम्बन्धी योगकारक ग्रह की हो तो प्रबल अशुभ फल मिलता है।

(घ) अन्तर्दशा किसी सम्बन्धी योगकारक ग्रह की हो तो मिश्रित फल प्राप्त होते हैं। कई विद्वानों के अनुसार शुभ फल मिलते हैं।

पापी ग्रह का अर्थ है–त्रिषडायधीश अष्टमेश एवं पापयुक्त मारकेश, केंद्रेश जिनकी दूसरी राशि, त्रिषडाय या अष्टम भाव में हो। शुभ का अर्थ है त्रिकोणेश जिसकी दूसरी राशि त्रिषडाय या अष्टम भाव में न हो।

योगकारक ग्रह का अर्थ है। वे केंद्रेश एवम् त्रिकोणेश जिनका आपस में सम्बन्ध हो परन्तु किसी अन्य भोवेश के साथ सम्बन्ध न हो।

(ङ) सम्बन्धी या असम्बन्धी समग्रह की अन्तर्दशा में पाप फल मिलता है, किन्तु उतना नहीं जितना शुभ ग्रह/योगकारक की अन्तर्दशा से।

(च) सम्बन्धी या असम्बन्धी पापग्रह की अन्तर्दशा पाप फल ही देगी।

22. मारक ग्रह की महादशा में उसके सम्बन्धी शुभ ग्रह की अन्तर्दशा में जातक की मृत्यु नहीं होती।

इसका अर्थ यह है कि मारक ग्रह की महादशा में सम्बन्धी या असम्बन्धी पाप ग्रह की अन्तर्दशा में ही मृत्यु होती है। सम्बन्धित पाप ग्रह निश्चित रूप में मृत्यु देती है।

23. (क) शनि की महादशा में जब शुक्र की अन्तर्दशा आती है तो शुक्र विशेष कर शनि का ही शुभाशुभ फल देता है।

(ख) शुक्र की महादशा में जब शनि की अन्तर्दशा आती है तो शनि विशेष तौर पर शुक्र के शुभाशुभ फल देता है। इस कारिका में सम्बन्धी या सधर्मी होने की कोई शर्त नहीं है। शनि व शुक्र में नैसर्गिक सम्बन्ध है। शनि की राशियों के लग्न में मकर व कुम्भ लग्न में शुक्र योग कारक ग्रह होता है। इस प्रकार शुक्र की राशियों के लग्न में शनि योगकारक ग्रह होता है। इसलिये इन दोनों में नैसर्गिक सम्बन्ध हो जाता है।

(ग) शुक्र व शनि यदि दोनों बलवान हो तो दशान्तर्दशा अशुभ फल देती है।

(घ) यदि एक बली व दूसरा निर्बल हो तो शुभ फल मिलता है।

(ङ) यदि दोनों निर्बल हो, 6, 8, या 2/12 या 6, 8, 12 भाव के स्वामी हो या 6, 8, 12 भाव में स्थित हो या 6, 8, 12 भाव के स्वामी से सम्बन्ध हो तो शुभ फल देता है।

(च) यदि एक शुभ दूसरा अशुभ हो तो भी शुभ फल मिलता है।

24. निम्न दशान्तर्दशा भी अशुभ फल देती है।

(क) जन्म नक्षत्र से 3, 5, 7 नक्षत्रों के स्वामियों की दशा भी अशुभ फल देती हैं।

(ख) अष्टमेश व चंद्रमा जिस राशि में स्थित है उसके स्वामी की दशान्तर्दशा।

(ग) शनि की दशा यदि चौथी दशा हो अर्थात् भोग्य दशा मंगल की है।

(घ) मंगल की दशा यदि पंचम दशा हो अर्थात् केतु की भोग्य दशा हो।

(ङ) यदि राहु की दशा पंचम दशा हो अर्थात् शुक्र की भोग्यदशा हो।

(च) ऐसे ग्रह की दशा हो जो शुरू के या अन्त के अंशो पर स्थित है।

(छ) 6, 8, 12 के स्वामी की दशा।

(ज) नैसर्गिक अशुभ ग्रह जो नीच व शत्रु राशि या षष्ठ भाव या एकादश भाव में स्थित हो। (फलदीपिका)

(झ) यदि द्वितीयेश एक नैसर्गिक अशुभ ग्रह हो, उसकी महादशा में नैसर्गिक अशुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो।

(ञ) यदि नैसर्गिक अशुभ ग्रह द्वितीय भाव में स्थित है और किसी अन्य नैसर्गिक अशुभ ग्रह से सम्बन्धित हैं तो उन ग्रहों की दशान्तर्दशा अशुभ फल देती है। (सर्वाथ चिंतामणी)

(ट) द्वितीयेश या सप्तमेश की अन्तर्दशा में विवाह होता है।

(ठ) त्रिकोणेश की दशान्तर्दशा या सम्बन्धित ग्रह की अन्तर्दशा में सन्तान उत्पन्न होती है।

इस प्रकार दशान्तर्दशा के शुभाशुभ फल को देखकर षडबल से ग्रह का बल देखकर फलित करना चाहिये। षड बल केवल ग्रह के बल को बतलाता है। वह ग्रह के शुभाशुभ फल को नहीं बतलाता। शुभाशुभ फल तो कुण्डली में स्थिति व भावाधिपतित्व से प्राप्त होता है। षडबल तो केवल बल अर्थात् मात्रा को बतलाता है, किस ग्रह से कितनी मात्रा में फल मिलना है। जैसे किस जातक को कितना धन प्राप्त होना है, 100 या 200 या 1,000 या 100.000 मात्रा षड बल बतलाएगा परन्तु धन मिलना है या धन की हानि होनी है, यह दशान्तर्दशा के शुभाशुभ पर निर्भर करता है। इसलिए दशान्तर्दशा को भी समझना अत्यन्त आवश्यक है। संक्षिप्त में हमने विंशोत्तरी पद्धति में दशान्तर्दशा के शुभाशुभ फल दिये हैं।

स्वोच्चे स्वगेहे यदि वा त्रिकोणे वर्गे स्वकीयेऽथ चतुष्टये वा।
नास्तङ्गतो नोऽशुभ दृष्टियुक्तो जन्माधिपः स्याच्छुभदः स्वपाके।।

जो ग्रह अपनी उच्च राशि, स्वराशि या मूल त्रिकोण राशि में हो, अथवा षडवर्ग में स्वक्षेत्री हो, अथवा केन्द्र स्थान में स्थित हो, सूर्य से अस्त न हो तथा पापग्रह से दृष्ट भी न हो तो ऐसा ग्रह अपनी दशा अन्तर्दशा में शुभ फल दिया करता है।

त्रिषडाय में बैठे शुभ ग्रह बाल्यावस्था में शुभ फल देते हैं, जब कि 3, 6, 11वें भाव में स्थित पाप ग्रह वृद्धावस्था (जीवन के अन्तिम समय) में धन, स्त्री व पुत्रादि के सुख को देते हैं।

वाल्यावस्था का एक दूसरा भी अर्थ हो। ग्रह के अंशों के अनुसार बालादि अवस्था या वृद्धास्था।

यदि कोई बल हीन या पाप पीड़ित ग्रह नवांश कुंडली में शुभ हो जाए तो वह पाप फल में कमी कर मिश्रता फल देता है। इसी प्रकार यदि कोई उच्चराशिस्थ ग्रह नवांश कुंडली में दुर्बल हो जाए तो वह अपनी दशा में पूर्ण शुभ फल नहीं दे पाता, बल्कि मिश्रित फल दिया करता है।

अपनी नीच राशि से उच्चराशि की ओर बढ़ने वाले आरोही ग्रह की दशा शुभ व उच्च से नीच की ओर जाने वाले अवरोही ग्रह की दशा को विद्वानों ने अशुभ माना है।

अध्याय 16

योगिनी दशा विचार

आजकल के व्यक्ति के पास समय बहुत कम है। वह अपनी रफ्तार तेज से तेज करना चाहता है। इस तेज रफ्तार के कारण दुर्घटनाओं की सम्भावना भी बढ़ गई है आयु और भी कम और अनिश्चित हो गई है। इसलिए योगिनी दशा का प्रयोग अधिक सटीक होता जा रहा है।

महर्षि पाराशर ने आठ योगिनी बतलाए हैं तथा इनका भी क्रम निश्चित है जैसे विंशोत्तरी दशा में ग्रहों का क्रम निश्चित है।

क्र. सं.	योगिनी	स्वामी	दशा के वर्ष
1.	मंगला	चंद्रमा	1
2.	पिंगला	सूर्य	2
3.	धान्या	गुरु	3
4.	भ्रामरी	मंगल	4
5.	भद्रिका	बुध	5
6.	उल्का	शनि	6
7.	सिद्धा	शुक्र	7
8.	संकटा	राहु	8

जब मनुष्य को प्रतिकूल योगिनी की दशा प्राप्त होती है तब कोई व्यक्ति जातक की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो पाता। इसलिए उस दशा की शान्ति के लिए ग्रह अनुसार उपाय करने चाहिये।

योगिनी दशा साधन

जन्म के समय चंद्रमा जिस नक्षत्र पर रहता है उस नक्षत्र के अंक में 3 जोड़कर 8 से भाग देना चाहिये। जो शेष बचे वह योगिनी दशा होती है।

योगिनी दशा बोध चक्र

	मंगला	पिगंला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्फा	सिद्धा	संकटा
स्वामी	चंद्रमा	सूर्य	गुरु	मंगल	बुध	शनि	शुक्र	राहु
वर्ष	1	2	3	4	5	6	7	8
				अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृग.
	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा	मघा	पू.फा.	उ.फा.	हस्त
नक्षत्र	चित्रा	स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पू.षा.	उ.षा.
	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पू.भा.	उ.भा.	रेवती		

इसमें अभिजित् नक्षत्र का ग्रहण नहीं है। इनके 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8 क्रमशः दशा वर्ष होते हैं। इसकी एक आवृत्ति 36 वर्ष की होती है।

दशा का भुक्त भोग्य काल जानने के लिये विंशोत्तरी दशा की तरह प्रक्रिया करनी होती है। मान लीजिए कि किसी जातक की भ्रामरी योगिनी दशा सिद्ध होती है। चंद्रमा अश्विनी नक्षत्र पर 10^0 अंश का है।

$13^0–20' = 800'$ मिनट पर वर्ष संख्या = 4 वर्ष

1 " " = $\frac{4}{800}$

$10^0 = 10X60 = 600$ $\qquad \frac{4X600}{800}$

= 3 वर्ष

ये तीन वर्ष भुक्त वर्ष है, शेष 4–3 = 1 वर्ष भोग्य वर्ष है। अर्थात् जातक को भ्रामरी योगिनी दशा का एक वर्ष और भुकतना है। दूसरा उदाहरण लें : भाग कि चंद्रमा स्पष्ट 11 रा. $20^0–55'$ है तो चंद्रमा रेवती नक्षत्र पर और उसका अंक 27 है।

27+3 = 30 ÷ 8 शेष = 6

अर्थात उल्का योगिनी दशा चल रही है। मीन राशि में रेवती नक्षत्र का मान 11 रा 16–40 से 30^0 तक का है।

चंद्रमा का स्पष्ट 11 रा. 20^0–55′ है तो चंद्रमा रेवती नक्षत्र पर भुक्त है।

(11/20–55)–(11/16–40) = 4^0–15′ = 255 मिनट

यदि मान 13^0–20′= 800′ हो तो भुक्त दशा वर्ष = 6

1 6

800

255 ″ $\frac{6X255}{800}$

= 1.9/25 = 1 वर्ष–10म.–29दि.

भोग्य वर्ष 6– (1–10–29) = 4 वर्ष–1 मा.– 1दि.

अन्तर्दशा विचार

विंशोत्तरी दशा की तरह योगिनी दशा में भी आठों अन्तर्दशाएं चलती हैं। विंशोत्तरी दशा की तरह यहां पर भी वही नियम है। पहले उसीकी अन्तर्दशा होती है।

$\frac{\text{दशा नाथ अन्तर्दशा नाथ}}{36}$ = वर्ष

माना उल्फा योगिनी दशा में संकटा योगिनी दशा की अन्तर्दशा का समय साधना है तो

$\frac{6X8}{36}$

= 1.333 = 1 वर्ष 4 मास उसकी तालिका निम्न प्रकार से होती है।

योगिनी दशान्तर्दशा चक्र

मंगला दशा वर्ष 1		पिंगला दशा वर्ष 2		धन्या दशावर्ष 3		भ्रामरी दशा वर्ष 4	
	व. मा. दि.		व. मा. दि.		व. मा. दि.		व. मा. दि.
मं.	00.00.10	पि.	00.01.10	धा.	00.03.00	भा.	00.05.10
पि.	00.00.20	धा.	00.02.00	भ्रा.	00.04.00	भ.	00.06.20
धा.	00.01.00	भ्रा.	00.02.20	भ.	00.05.00	उ.	00.08.00
भ्रा.	00.01.10	भ.	00.03.10	उ.	00.06.00	सि.	00.09.10
आर्द्र.	00.01.20	उ.	00.04.00	सि.	00.07.00	सं.	00.10.20
उल्क	00.020.0	सि.	00.04.20	सं.	00.08.00	मं.	00.01.10
सिद्धा	00.02.10	सं.	00.05.10	मं.	00.01.00	पि.	00.02.20
संकटा	00.02.20	मं.	00.00.20	पि.	00.02.00	ध.	00.04.00
भद्रिकादशा वर्ष 5		**उल्का दशा वर्ष 6**		**सिद्धा दशा वर्ष 7**		**संकटा दशा वर्ष 8**	
	व.मा.दि.		व.मा.दि.		व.मा.दि.		व.मा.दि.
भ.	00.08.10	उ.	01.00.00	सि.	01.04.10	सं.	01.09.10
उ.	00.10.00	सि.	01.02.00	सं.	01.06.20	मं.	00.02.20
सि.	00.11.20	सं.	01.04.00	मं.	00.02.10	पि.	00.05.10
सं.	01.01.10	मं.	00.02.00	पि.	00.04.20	धा.	00.08.00
मं.	00.01.20	पि.	00.04.00	धा.	00.07.00	भ्रा.	00.10.20
पि.	00.03.10	धा.	00.06.00	भ्रा.	00.09.10	भ.	01.01.10
धा.	00.05.00	भ्रा.	00.08.00	भ.	00.11.20	उ.	01.04.00
भ्रा.	00.06.20	भ.	00.10.00	उ.	01.02.00	सि.	01.06.20

योगिनी दशा फल

मंगला दशा फल

मंगला की महादशा में धर्म, विप्र देवता में भक्ति, अनेक प्रकार के भोग, यश, धन, राजा से घोड़ा–हाथी आदि सवारी का लाभ, घर में मंगल कार्य, वस्त्र–भूषण, स्त्री से सुख और ज्ञान की वृद्धि होती है।

पिंगला दशा फल

पिंगला की दशा में हृदयरोग, शोक, कुसंगति से शारीरिक और मानसिक व्याधि, तृष्णा, रक्तविकार, ज्वर, पित्त–शूल, कुस्त्री से संग, पुत्र, नौकर आदि की पीड़ा, मान, धन और प्रेम का नाश होता है।

धन्या दशा फल

धन्या की दशा में धन, सुख का लाभ, व्यापार में उन्नति, भोग, सम्मान की वृद्धि, शत्रुओं का नाश, विद्यालाभ; राजाओं से आदर, ज्ञानोदय, स्त्री से सुख, तीर्थयात्रा, देवताओं में भक्ति आदि अनेक सुख होते हैं। यह दशा भाग्य से ही मिलती है।

भ्रामरी दशा फल

भ्रामरी की दशा में दुर्गम स्थान, वन, पहाड़, दुर्गम बाग, आतप (धूप) में व्याकुल होता हुआ दूर–दूर मृग के समान तृष्णाकुल होकर घूमता है। यदि राजवंशीय हो तो वह भी राज्य से वंचित होकर पृथ्वी में घूमकर कष्ट पाता है।

भद्रिका दशा फल

भद्रिका की दशा में अपने परिजन, ब्राह्मण और राजा से मैत्री, मित्रों के द्वारा आदर, घर में मंगल कार्य, सब प्रकार के सुख; व्यवसाय में रुचि, राज्यलाभ, अत्यन्त सुन्दरी युवतियों से भोग–विलास आदि सुख होते हैं।

उल्का दशा फल

उल्का की महादशा में मान, धन, गौ, वाहन, व्यापार, वस्त्र, इन सबों की हानि, राजा से दण्डभय, नौकर, सन्तान, स्त्री से शत्रुता, हृदय, उदर, कान, दाँत और पैर में रोग होता है।

सिद्धा दशा फल

सिद्धा की महादशा में सब कार्यों में सिद्धि, सौभाग्य, भोग मान, धन की वृद्धि, विद्या, राजा से अधिकार, धन, धर्मलाभ, ज्ञानोदय, व्यापार में रुचि, वस्त्र, भूषण लाभ, सन्तान के विवाहादि शुभ कार्य, सज्जनों से संगति और राजा से ऐश्वर्य का लाभ होता है।

संकटा दशा फल

संकटा की दशा में राज्य नाश, गृह, गाँव, नगर, गोष्ठादि में अग्निभय, तृष्णा, रोग, धातु की क्षीणता, पुत्र–स्त्री से वियोग, मोह, शत्रुभय, देह में दुर्बलता होती है। और क्या? जन्मकाल के बाद संकटा की दशा या अन्तर्दशा बिना मृत्यु नहीं होती। अर्थात् संकटा की दशा या अन्तर्दशा आदि आने पर ही मृत्यु होती है।

संकटा की विशेषता

भ्रामरी या उल्का की दशा में यदि संकटा की अन्तर्दशा आती है तो उस समय में मृत्यु (अष्टविध मृत्यु में से कोई एक) अवश्य होती है या मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

योगिनी अन्तर दशा फल

मंगला में मंगला

मंगला की दशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो उस समय में मित्र, पुत्र, स्त्री, स्वशरीर में सब प्रकार के सुख और घर में मंगल कार्य होता है।

मंगला में पिंगला

मंगला में पिंगला की अन्तर्दशा हो तो अपने कुटुम्बियों से कलह, मन में उद्वेग और अनेक प्रकार की पीड़ा होती है।

मंगला में धन्या

मंगला में धन्या का अन्तर हो तो हाथी, घोड़ा, गौ, धन आदि का लाभ, पुत्र–मित्रादि से सुख, अनेक प्रकार से भोग–विलास होता है।

मंगला में भ्रामरी

मंगला में भ्रामरी का अन्तर हो तो स्त्री–मित्रों से कलह, विदेश वास, धन नाश, किन्तु राजा से परिचय होता है।

मंगला में भद्रिका

मंगला में भद्रिका का अन्तर हो तो धन–धान्य की वृद्धि, पुत्र–स्त्री से प्रेम, परिजनों से आमोद–प्रमोद और देवताओं में भक्ति होती है।

मंगला में उल्का

मंगला में उल्फा हो तो धन हानि, कीर्ति हानि, पुत्र का उद्वेग, स्त्री, मित्र और पशुओं की पीड़ा और राजा से दण्डभय होता है।

मंगला में सिद्धा

मंगला की दशा से सिद्धा का अन्तर हो तो पुत्र, धन, स्त्री से सुख, अनेक प्रकार भोग–विलास, बन्धु और मित्रों का समागम होता है।

मंगला में संकटा

मंगला में संकटा का अन्तर हो तो जल, अग्नि, चोर और राजा से पीड़ा, कलह तथा मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

पिंगला में पिंगला

पिंगला में पिंगला का ही अन्तर हो तो रोग, शोक, व्यसन से पीड़ा, मन में उद्वेग, सन्ताप और क्लेश होता है।

पिंगला में धन्या

पिंगला में धन्या हो तो धन–धान्य, पुत्र, भोग–विलास, इष्ट सिद्धि, उपवन और स्त्री से सुख होता है।

पिंगला में भ्रामरी

पिंलगा में भ्रामरी हो तो विदेश वास, घर, गाँव, नगर और परिजनों से हानि, अपने कुटुम्बों से कलह होता है।

पिंगला में भद्रिका

पिंगला में भद्रिका का अन्तर आता है, तो सर्वथा कल्याण, स्थानान्तर से तथा पुत्र से लाभ, यश और व्यापार में विशेष लाभ होता है।

पिंगला में उल्का

पिंगला में उल्का आती है तो उस समय में बन्धुओं से विग्रह, राजा, चोर और समाज से पीड़ा होती है।

पिंगला में सिद्धा

पिंगला में सिद्धा की अन्तर्दशा हो तो मन्त्र–यन्त्रों की सिद्धि, धन धान्य का लाभ, किन्तु कास, श्वास और प्रमेह का भय होता है।

पिंगला में संकटा

पिंगला दशा में संकटा हो तो धन की हानि, दुष्ट रोग का भय एवं राजा और शत्रु का भी भय रहता है।

पिंगला में मंगला

पिंगला में मंगला हो (अर्थात्–मंगला की अन्तर्दशा हो) तो अनेक रोग, शोक, मोह, भय आदि पीड़ा और आयुर्दाय की हानि होती है।

धन्या में धन्या

धन्या की दशा में धन्या की अन्तर्दशा हो तो भूमि, गाँव, धन–धान्यादि का लाभ, राजा से धन, पुत्र–स्त्री से अनेक प्रकार के सुख होते हैं।

धन्या में भ्रामरी

धन्या में भ्रामरी का अन्तर हो तो भ्रमण, कष्ट, धन हानि, स्थानान्तरण, गमन और अपने जन से विरोध होता है।

धन्या में भद्रिका

धन्या में भद्रिका आती है तो सौभाग्य, गृह और मित्रों से सुख, धान्य की वृद्धि, राज मन्त्रित्व, राजा से वाहन, वस्त्र और भूमि का लाभ होता है।

धन्या में उल्का

धन्या की दशा में उल्का का अन्तर हो तो अनेक प्रकार के कष्ट, हृदय, कमर में शूल से पीड़ा और धन हानि होती है।

धन्या में सिद्धा

धन्या में सिद्धा का अन्तर हो तो पुत्र सुख, मित्र का आगमन और अनेक प्रकार के भोग–विलास प्राप्त होते हैं।

धन्या में संकटा

धन्या में संकटा का अन्तर हो तो बन्धन तथा नीति, व्यापार, राजदरबार के कार्य में मान और उत्साह नष्ट हो जाता है।

धन्या में मंगला

धन्या की दशा में मंगला का अन्तर हो तो उसके घर में सर्वदा मंगल, धान्य, सोना–चाँदी, पुत्र–स्त्री आदि से सुख प्राप्त होता है।

धन्या में पिंगला

धन्या में पिंगला की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार से भूमि, धन का नाश, उत्साह–भंग, राजा से भय, शिर में रोग और शूल होता है।

भ्रामरी में भ्रामरी

भ्रामरी दशा में भ्रामरी का अन्तर हो तो भय, मोह, विष से पीड़ा, अपने स्थान में, अपने परिजन में, पर्वत में, शत्रुओं से, दुष्ट जन से और विष से पीड़ा होती है।

भ्रामरी में भद्रिका

भ्रामरी में भद्रिका आती है तो विदेश यात्रा, मित्रों का संग, विद्यालाभ, राजा से सम्मान होता है।

भ्रामरी में उल्का

भ्रामरी में उल्का हो तो ज्वर, शूल, रक्त विकार से पीड़ा, धन–पुत्र–स्त्री को कष्ट और हानि होती है।

भ्रामरी में सिद्धा

भ्रामरी में सिद्धा हो तो सदा कार्य में सिद्धि, विवेक, विद्या और निधि का लाभ, भय और रोग का नाश होता है।

भ्रामरी में संकटा

भ्रमरी में संकटा हो तो मरण, कष्ट, शोक, मोह, रोग तथा राजा के यहाँ चोरी में नाम लिखा जाता है।

भ्रामरी में मंगला

भ्रामरी दशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो सदा मंगल, विलास, अनेक प्रकार के सुख और राजा की सेवा से पुष्टि होती है।

भ्रामरी में पिंगला

भ्रामरी में पिंगला हो तो गुह्येन्द्रिय और मुख–पैर में रोग, राजा, घोड़ा, महिष, बाघ और व्रण–इन सबों का भय बना रहता है।

भ्रामरी में धन्या

भ्रामरी में धन्या का अन्तर हो तो धन, वाहन, भोग–विलास की वृद्धि राजा तथा भिल्लों से प्रीति और शत्रुओं को नाश होता है।

भद्रिका में भद्रिका

भद्रिका में भद्रिका का अन्तर हो तो यश, कल्याण, घोड़ा, गौ आदि का लाभ, व्यसन, पीड़ा का नाश और पुण्य–पथ का ज्ञान होता है।

भद्रिका में उल्का

भद्रिका में उल्का का अन्तर हो तो लोगों से विवाद रोग, स्थान नाश, धनहानि और उद्वेग होता है।

भद्रिका में सिद्धा

भद्रिका में सिद्धा का अन्तर आता है तो उस समय में ब्राह्मण और देवता में भक्ति, पुत्र–स्त्री,–मित्र अपने देह, घर–ग्राम सर्वत्र सुख और उत्सव होता रहता है।

भद्रिका में संकटा

भद्रिका में संकटा का अन्तर प्राप्त होता है तो अनेक संकट, पीड़ा, मोह, शोक, विपत्ति मतिभ्रम और विदेश गमन से पीड़ा होती है।

भद्रिका में मंगला

भद्रिका में मंगला हो तो सम्मान, धन, भूमि, यश, व्यापार में लाभ, पुत्रों से सुख और वंशजों की वृद्धि होती है।

भद्रिका में पिंगला

भद्रिका में पिंगला हो तो पित्तरोग, कृषि, वाणिज्य, भूमि और वृद्धजनों के आश्रय से अनेक वस्तु का लाभ होता है।

भद्रिका में धन्या

भद्रिका में धन्या का अन्तर हो तो पुत्र, स्त्री और मित्रों से सुख, घर में नित्य मंगल उत्सव होता रहता है।

भद्रिका में भ्रामरी

भद्रिका में भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो रुधिर विकार, अग्नि और मृत्यु का भय, गृह, खेती तथा शत्रुओं का नाश तथा अपने परिजनों में सुख होता है।

उल्का में उल्का

उल्का में उल्का का अन्तर हो तो अचानक शत्रु के द्वारा धन की हानि, व्यथा और राज्यनाश का भी भय रहता है।

उल्का में सिद्धा

उल्का की दशा में सिद्धा का अन्तर हो तो सिद्धा अपने शुभ फल को नहीं देकर उल्का के अशुभ फल को ही देती है तथा विदेश गमन कराती है।

उल्का में संकटा

उल्का की दशा में संकटा का अन्तर आता है तो मृत्यु का भय, स्त्री–पुत्र, मित्र एवं नौकरजनों की हानि होती है तथा कुल की क्षति होती है।

उल्का में मंगला

उल्का में मंगला का अन्तर आता है तो मोह तथा धन, मित्र, विवेक, स्त्री आदि से सुख तथा पाप और रोग की हानि होती है।

उल्का में पिंगला

उल्का की दशा में पिंगला का अन्तर हो तो कोढ़, खुजली और मस्तक रोग से पीड़ा और भ्रमण होता है।

उल्का में धन्या

उल्का में धन्या के अन्तर आने से न लाभ होता है न सुख होता है, वात और कफ विकार से रोग और स्त्री–पुत्रादि अपने जनों से झगड़ा होता है।

उल्का में भ्रामरी

उल्का में भ्रामरी का अन्तर रहता है तब मन में उद्वेग, भ्रम, शत्रु का भय और अनेक क्लेश होता है।

उल्का में भद्रिका

उल्का में भद्रिका का अन्तर हो तो कल्याण और धन का लाभ, भूषण–वस्त्र की हानि और कुल के जन तथा मित्रों से सुख होता है।

सिद्धा में सिद्धा

सिद्धा की दशा में सिद्धा की ही अन्तर्दशा हो तो सब कार्य में सिद्धि, स्वजनों से सुख, ऐश्वर्य की वृद्धि, पुत्रादिकों से सुख होता है।

सिद्धा में संकटा

सिद्धा में संकटा का अन्तर रहता है तो बन्धन, राजा और चोर से धनहानि, भय और देश छोड़ना पड़ता है।

सिद्धा में मंगला

सिद्धा में मंगला का अन्तर हो तो विलास, स्वजन से सुख, राजा से धनलाभ तथा सब कार्यों में सिद्धि होती है।

सिद्धा में पिंगला

सिद्धा में पिंगला का अन्तर हो तो अभिमान, क्रोध, अग्निभय, अपने जनों से वैर और परधन का लाभ होता है।

सिद्धा में धन्या

सिद्धा में धन्या का अन्तर आता है तो पूर्वपुण्य फल का उदय और सब अभिलाषाओं की सिद्धि होती है।

सिद्धा में भ्रामरी

सिद्धा की दशा में भ्रामरी का अन्तर हो तो अपने स्थान का त्याग, व्यसन और राजा से भय रहता है।

सिद्धा में भद्रिका

सिद्धा में भद्रिका का अन्तर हो तो घर में मंगल, भोग–विलास, विद्या, सुख, धन का लाभ, गुण की वृद्धि और सब कार्य में सिद्धि होती है।

सिद्धा में उल्का

सिद्धा की दशा में उल्का का अन्तर हो तो धन–धान्य का नाश, कष्ट, शोक, व्यसन, गुह्येन्द्रिय में रोग और मोह होता है।

संकटा में संकटा

संकटा की दशा में संकटा का अन्तर हो तो मृत्यु, राजदंड, देश त्याग और धन का नाश होता है।

संकटा में मंगला

संकटा में मंगला का अन्तर हो तो शिरोरोग तथा अनेक रोगव्याधि, व्यसन से स्त्री को पीड़ा होती है।

संकटा में पिंगला

संकटा में पिंगला के अन्तर आने पर अचानक धनहानि, पुत्रशोक और शत्रुभय होता है।

संकटा में धन्या

संकटा में धन्या का अन्तर हो तो गुल्मरोग से उदर में पीड़ा, पुत्रों से सुख, देश और लोक में सुयश होता है।

संकटा में भ्रामरी

संकटा में भ्रामरी का अन्तर हो तो पृथिवी में भ्रमण, देश, ग्राम, नगर–द्वार, राज्य आदि की क्षति और शत्रु का भय होता है।

संकटा में भद्रिका

संकटा में भद्रिका का अन्तर हो तो विद्या, भूषण, वस्त्र, सुयश की वृद्धि और शत्रुओं से विग्रह होता है।

संकटा में उल्का

संकटा में उल्का का अन्तर हो तो संचित धन का नाश, मृत्यु और पशुओं को पीड़ा होती है।

संकटा में सिद्धा

संकटा की दशा में सिद्धा की अन्तर्दशा हो तो अत्यन्त उत्साह, पुत्रों से सुख और मन में सतत प्रसन्नता रहती है।

अष्टोत्तरी दशा

अष्टोत्तरी दशा का मान 108 वर्ष होता है। इसमें

सूर्य 06 वर्ष। चन्द्रमा 15 वर्ष। मंगल 08 वर्ष। बुध 17 वर्ष। शनि 10 वर्ष। गुरू 19 वर्ष। राहु 12 वर्ष। शुक्र 21 वर्ष। कुल वर्ष 108।

108 वर्ष आठ ग्रह क्रम से दशा आद्रा से आरम्भ कर 4, 3, 4, 3, 4, 3, 4, 3 नक्षत्र क्रम से सूर्य, चंद्र, मंगल बुध, शनि, गुरु, राहु एवं शुक्र के होते हैं उनकी तालिका इस प्रकार बनेगी।

दशानाथ	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	शनि	गुरु	राहु	शुक्र
नक्षत्र	आर्द्रा पुनर्वसु पुष्य आश्लेषा	मघा पूर्व फा. उ.फा.	हस्ता चित्रा स्वाती विशाखा	अनुराधा ज्येष्ठा मूल	पूर्व आ. उ.आ. श्रवण अभिजित	धनिष्ठा शतभिषा पूर्व भा.	उ.भा. रेवती अश्विनी भरणी	कृत्तिका रोहिणी मृगशिरा
वर्ष	6	15	8	17	10	19	12	21

कई ज्योतिष विद्वानों का मत है कि शुक्ल पक्ष में जन्म हो तो अष्टोत्तरी तथा कृष्ण पक्ष में जन्म हो तो विंशोत्तरी दशा का प्रयोग करना चाहिये। कुछ अन्य विद्वान दशा आरम्भ आर्द्रा नक्षत्र से न मान कर कृत्तिका नक्षत्र से दशा आरम्भ करते हैं। परन्तु कृत्तिका नक्षत्र से दशारम्भ सर्वमान्य नहीं है। आज कल प्रायः सर्वत्र आर्द्रा नक्षत्र से ही गिनकर अष्टोत्तरी दशा का विचार किया जाता है।

दशा का भुक्त भोग्य काल जानने के लिए विंशोत्तरी दशा की तरह क्रिया करनी होगी। अर्थात् चंद्र स्पष्ट के अनुपात द्वारा भुक्त भोग्य जानना सुगम होगा।

सारी प्रक्रिया सोदाहरण पीछे समझा चुके हैं। अन्तर केवल इतना है कि जहां दशा वर्षों से गुणा करनी है वहां दशा वर्ष अभीष्ट दशा के ही लेने चाहिये। अष्टोत्तरी दशा साधन में अष्टोत्तरी दशा वर्ष तथा योगिनी दशा में योगिनी के दशावर्ष का ग्रहण होगा। शेष क्रिया पूर्ववत रहेगी।

योगिनी तथा अष्टोत्तरी दशान्तर्दशा में दशा फल ग्रहों के नैसर्गिक फल के अनुसार रहेंगे। भावाधिपति के अनुसार नहीं। पुस्तक के आरम्भ में हम नैसर्गिक दशा व अन्तर्दशा के फल लिख चुके हैं। वह फल यहां प्रयोग होंगे।